CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

महामना मालवीयजी और उनकी अमर कृति

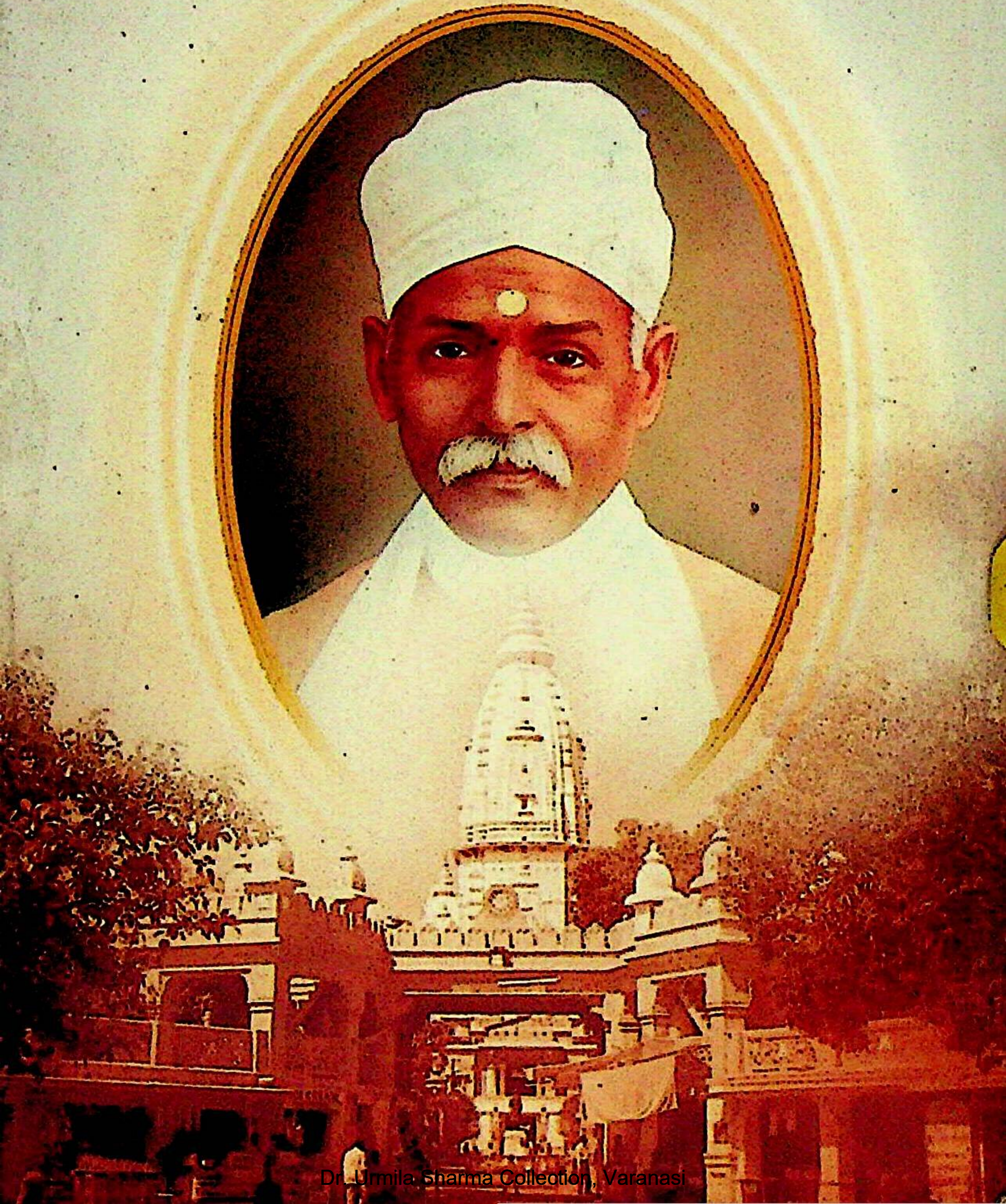

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुल गीत

मधुर मनोहर अतीव सुन्दर, यह सर्वविद्या की राजधानी।
यह तीन लोकों से न्यारी काशी,
सुज्ञान धर्म और सत्यराशी।
बसी है गङ्गा के रम्य तट पर, यह सर्वविद्या की राजधानी।
मधुर...।।

नये नहीं हैं यह ईंट-पत्थर,
है विश्वकर्मा का कार्य सुन्दर।
रचे हैं विद्या के भव्य मन्दिर, यह सर्वसृष्टी की राजधानी।
मधुर...।।

यहाँ की है यह पवित्र शिक्षा,
कि सत्य पहले फिर आत्म-रक्षा।
बिके हरिश्चन्द्र थे यहीं पर, यह सत्यशिक्षा की राजधानी।
मधुर...।।

वह वेद ईश्वर की सत्यवानी,
बनें जिन्हें पढ़ के ब्रह्मज्ञानी।
थे व्यास जी ने रचे यहीं पर, यह ब्रह्म-विद्या की राजधानी।
मधुर...।।

वह मुक्तिपद को दिलानेवाली,
सुधर्म पथ पर चलानेवाली।
यहीं फले-फूले बुद्ध शङ्कर, यह राज-ऋषियों की राजधानी।
मधुर...।।

सुरम्य धाराएँ वरुणा असी,
नहाये जिनमें कबीर तुलसी।
भला हो कविता का क्यों न आकर, यह वाग्विद्या की राजधानी।
मधुर...।।

विविध कला अर्थशास्त्र गायन
गणित खनिज औषधि रसायन।
प्रतीचि-प्राची का मेल सुन्दर, यह विश्वविद्या की राजधानी।
मधुर...।।

यह मालवी की है देशभक्ति,
यह उनका साहस यह उनकी शक्ति।
प्रगट हुई है नवीन होकर, यह कर्मवीरों की राजधानी।
मधुर मनोहर अतीव सुन्दर, यह सर्वविद्या की राजधानी।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

4.2

महामना मालवीयजी
और
उनकी अमर कृति

एस्. सोमस्कन्दन्

पयस्वती प्रकाशन
वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

© लेखक
श्री एस्. सोमस्कन्दन्
भूतपूर्व उपकुलसचिव (प्रशासन)
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रकाशक
पयस्वती प्रकाशन
N. ४/१८ A (क) राधाकुञ्ज
करौंदी, वाराणसी -२२१००५

प्रथमावृत्ति २००६
पुनर्मुद्रण २०१०
मूल्य ६०/-

मुद्रक
महावीर प्रेस
भेलूपुर, वाराणसी

अक्षर संयोजन
सुभाष सिंह यादव

आवरण सज्जा
अमित कुमार अंशु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महान् कर्मयोगी तपस्वी

भारत भूषण

महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय जी

की १४६वीं जयन्ती के शुभ अवसर पर

समर्पित

श्रद्धा-पुष्प

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१

परमपूज्य महामना मदन मोहन मालवीयजी एक युगमहापुरुष थे। विक्रम सम्वत् १९१८ पौष कृष्ण अष्टमी बुधवार तदनुसार २५ दिसम्बर १८६१ ई० को तीर्थराज प्रयाग में उन्होंने पण्डित ब्रजनाथ और श्रीमती मूना देवी के पुत्र के रूप में जन्म लिया।

इनके पूर्वज मालवा के रहने वाले थे। पन्द्रहवीं शताब्दी ईस्वी में मालवा के किसी राजा ने निश्चय किया कि पंच द्राविड़ और पंच गौड़ ब्राह्मणों को एक पंगत में बैठाकर भोजन कराया जाय। श्रीगौड़ ब्राह्मण भारद्वाज गोत्री चतुर्वेदी महामना मालवीयजी के पूर्वज इसके लिए सहमत नहीं हुए और वे अपना घर और गाँव छोड़कर पूरब की ओर चल दिये। कुछ समय पटना में निवास करने के पश्चात् उनमें कुछ लोग मिरजापुर में बस गये और कुछ लोग प्रयाग, त्रिवेणी तट पर बसना ही श्रेयस्कर समझ कर प्रयाग के भारतीय भवन मुहल्ले में बसे।

मदन मोहन मालवीयजी के पितामह पण्डित प्रेमधरजी प्रयाग में 'परम भागवत' के नाम से प्रसिद्ध हो गये। वे राधाकृष्ण के अनन्य भक्त थे। वे नित्य तड़के गंगास्नान के लिए निकल जाते थे। एक दिन गङ्गास्नान करके लौटे तो उन्होंने देखा कि उनके मुहल्ले में बड़ी भीड़ जमी है। लोगों ने बताया कि जंगल से एक शेर आकर नाले के पास के एक मकान में घुसकर बैठ गया है, किसी की हिम्मत नहीं है कि मकान के भीतर पैर रक्खे। प्रेमधरजी बिना घबराये मकान के अन्दर गये तो देखा कि एक बड़ा सिंह बड़े रोब से वहाँ बैठा है। उन्हें देखकर वह न तो गुर्राया और न झपटा। प्रेमधरजी आगे बढ़े और अपने हाथ में लिये कमण्डलु से उसके खुले मुँह में गङ्गाजल डाल दिया और बाहर आ गये। उन्हें देखकर लोगों में हिम्मत आ गयी। लाठी लेकर बहुत लोग मकान में घुस गये और सिंह को मार भगाया।

कहते हैं कि प्रेमधरजी ने १०८ दिन में भागवत का १०८ बार पारायण किया था। चौरासी वर्ष भगवद्भजन करने के बाद वे एक दिन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गङ्गास्नान करके गङ्गातट पर पद्मासन लगाकर ध्यान में बैठ गये और परमात्मा में लीन हो गये।

प्रेमधरजी के चार पुत्र हुए। उनमें सबसे छोटे थे ब्रजनाथजी। अपने पिता के समान वे भी परम भागवत थे। सदाचारी रहकर उन्होंने संस्कृत विद्या का अध्ययन कियां और वे संस्कृत के अच्छे पण्डित हो गये। पच्चीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने भागवत की कथा कहनी प्रारम्भ की और कुछ ही वर्षों में वे एक प्रसिद्ध व्यास बन गये। उनके मधुर कण्ठ से भावमय भागवत की कथा सुनने के लिए लोग उत्सुक रहते थे। रीवाँ, दरभङ्गा और काशी के महाराजाओं के दरबार में उनका विशेष सम्मान होता था।

पण्डित ब्रजनाथ व्यासजी को छः पुत्र और दो कन्याएँ हुईं। दो पुत्र और दो पुत्रियों के बाद तृतीय पुत्र के रूप में महामना मदनमोहन मालवीयजी का जन्म हुआ। 'परम भागवत' पितामह प्रेमधरजी और परम धार्मिक पिता ब्रजनाथ व्यास के पवित्र एवं सात्विक गुणों का पूरा प्रभाव मदन मोहनजी में बचपन में ही दीखता था। पिता के संरक्षण में ही उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण की। पिताजी से सुनते-सुनते अनेक संस्कृत के श्लोक, स्तोत्र, भजन इत्यादि उन्हें कंठस्थ हो गये थे। घर में प्रारम्भिक शिक्षा के बाद उन्हें पण्डित हरदेवजी की धर्मज्ञानोपदेश पाठशाला में भरती किया गया। वहाँ मनुस्मृति, गीता और अनेक नीतिश्लोक उन्हें कंठस्थ कराये गये। पण्डित हरदेवजी अपने शिष्यों को दूध पिलाते और कसरत करवाते थे। कुश्ती भी लड़वाते थे। शारीरिक बल्ल पर वे बहुत जोर डालते थे। उनका विचार था कि प्रत्येक विद्यार्थी को शारीरिक रूप से बलवान् बनना चाहिए। स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन एवं स्वस्थ विचार के साथ ही प्रत्येक विद्यार्थी को जीवन में आगे बढ़ना चाहिए। गुरुहरदेवजी की पाठशाला में पढ़ने के पश्चात् मदन मोहनजी को विद्या धर्म प्रवर्द्धिनी सभा की पाठशाला में पढ़ने भेजा गया। उस पाठशाला के प्रधान आचार्य पण्डित देवकीनन्दन बालक मदन मोहन को भाषण देने की कला में निपुण बनाना चाहते थे। वे प्रयाग के माघ मेला में सात वर्षीय बालक मदन मोहन को एक मोढ़े पर खड़ा कर उनसे व्याख्यान दिलवाया करते थे। बड़ी सभा में निर्भीक होकर प्रवचन और व्याख्यान देने में समर्थ हो गये बालक मदन मोहन। नींव पक्की हो गयी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नौ वर्ष की अवस्था में उनका यज्ञोपवीत हुआ। तदनन्तर प्रयाग में सन् १८६१ ई० में खुले गवर्नमेण्ट हाई स्कूल में मदन मोहनजी ने पढ़ना आरम्भ कर दिया। वहाँ से एन्ट्रेन्स परीक्षा पास करने के बाद वे म्योर सेन्ट्रल कालेज में पढ़ने लगे। कालेज में उनका एक पाठ्य विषय संस्कृत था। उस कालेज में संस्कृत के प्राध्यापक पण्डित आदित्यराम भट्टाचार्य थे। मालवीयजी उनके सम्पर्क में आये। लोक सेवा में अपने शिष्य की रुचि देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। आदित्य राम भट्टाचार्य जी ने सन् १८८० ई० में प्रयाग में 'हिन्दू समाज' की स्थापना की थी। उन्होंने मालवीयजी को उस समाज का सदस्य बना दिया और अपने विद्यार्थी जीवन में ही मालवीयजी समाज सेवा में लग गये।

सन् १८८४ ई० में मालवीयजी कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी०ए० परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये। आगे एम०ए० की पढ़ाई करने की उनकी प्रबल इच्छा थी। परन्तु घर की आर्थिक स्थिति को देखते हुए उन्हें यह विचार त्यागना पड़ा। ४० रुपये मासिक वेतन पर उन्होंने गवर्नमेण्ट हाई स्कूल में अध्यापक की नौकरी स्वीकार कर ली। कुछ समय बाद उनका मासिक वेतन ६० रु० हो गया। इसका अधिकांश भाग वे अपनी माताजी को परिवार के भरण-पोषण के लिए दे देते थे।

मालवीयजी एक सफल अध्यापक सिद्ध हुए। कहते हैं कि छात्रों के ऊपर उनकी स्नेहपूर्ण कृपा, कोमल व्यवहार का, वाणी के माधुर्य का तथा उनके आकर्षक व्यक्तित्व का बहुत प्रभाव था। सभी उनका सम्मान करते थे। अनुशासन के सम्बन्ध में वे दृढ़ रहते थे। वे विद्यार्थियों को दृढ़ता और निर्भीकता से अपने कर्त्तव्य का पालन करने का उपदेश देते थे। उनके उपदेशों का विद्यार्थियों पर विशेष प्रभाव पड़ता था।

सन् १८८५ ई० में इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना होते ही प्रयाग में सन् १८८० में स्थापित 'हिन्दू समाज' को 'मध्य हिन्दू समाज' के नाम से संघटित किया गया। कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन सन् १८८६ ई० में दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में कलकत्ते में दादाभाई नौरोजी की अध्यक्षता में हुआ। 'मध्य हिन्दू समाज' के प्रतिनिधि के रूप में मालवीयजी अपने गुरु आदित्यराम भट्टाचार्य के साथ उस अधिवेशन में सम्मिलित हुए। अधिवेशन के चतुर्थ दिन मालवीयजी ने अपने गुरु की अनुमति से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देश के एक वरिष्ठ नेता और सुप्रसिद्ध वक्ता सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी द्वारा प्रस्तुत एक प्रस्ताव का समर्थन करते हुए प्रतिनिधि संस्थाओं की स्थापना पर बहुत ही उत्तम भाषण दिया। मालवीयजी का यह भाषण वाग्मिता का एक उच्चतम नमूना था। उस भाषण को सुनकर अधिवेशन के अध्यक्ष दादाभाई नौरोजी ने कहा "इस नवयुवक की वाणी में स्वयं भारतमाता मुखर हो रही हैं।"

सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी ने कहा कि "यह भाषण मेरे सुने हुए भाषणों में सबसे अच्छा था, इसका कांग्रेस के प्रतिनिधियों के हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा और इस भाषण ने इस नवयुवक को कांग्रेस के भावी नेता के रूप में निर्दिष्ट कर दिया।"

कांग्रेस के संस्थापक ह्यूम साहब ने अधिवेशन की रिपोर्ट में लिखा— मालवीयजी के इस भाषण को 'श्रोताओं ने तन्मय होकर सुना, उनके धारा-प्रवाह भाषण से सभी लोग मन्त्रमुग्ध हो गये।'

उस एक भाषण से ही मालवीयजी प्रकाश में आ गये, उनकी लोकप्रसिद्धि हो गयी। कांग्रेस के उस अधिवेशन में कालाकांकर के राजा रामपाल सिंह भी उपस्थित थे। मालवीयजी के भाषण से प्रसन्न होकर उन्होंने उन्हें पुरस्कृत किया। राजा रामपाल सिंह एक प्रगतिशील और देशभक्त व्यक्ति थे। कुछ वर्षों के लिए वे इंगलैण्ड में रहे। उस बीच उन्होंने वहाँ 'हिन्दुस्तान' नामक एक साप्ताहिक समाचार पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। सन् १८८५ ई० में भारत वापस आने के बाद वह साप्ताहिक, हिन्दी में कालाकांकर से प्रकाशित होने लगा। राजा रामपाल सिंह स्वयं उसके संपादक थे। उन्होंने मालवीयजी से अनुरोध किया कि वे साप्ताहिक हिन्दुस्तान के सह-सम्पादक बन जायें। कुछ शर्तों पर मालवीयजी ने 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन स्वीकार कर लिया। मालवीयजी की नियुक्ति डेढ़ सौ रुपये मासिक वेतन पर हुई, पर पन्द्रह दिन बाद ही दो सौ रुपये कर दिये गये।

जुलाई सन् १८८७ ई० में अध्यापन कार्य छोड़कर मालवीयजी ने 'हिन्दुस्तान' के सम्पादन का उत्तरदायित्व ग्रहण किया। उनके सम्पादकत्व में 'हिन्दुस्तान' समाचार पत्र लोकप्रिय बन गया। तत्कालीन समस्याओं पर मालवीयजी के सम्पादकीय लेख एवं टिप्पणियाँ सन्तुलित और लाभप्रद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होती थीं। सरकार भी उनके समाचार पत्र को लोकोपयोगी स्वीकार करती थी। राजा रामपाल सिंह तो मालवीयजी के सम्पादन कार्य की सदा प्रशंसा ही करते थे।

'हिन्दुस्तान' समाचार पत्र के सम्पादन के साथ-साथ मालवीयजी को कांग्रेस का कार्य भी करना पड़ता था। सन् १८८७ में वे कांग्रेस के पश्चिमोत्तर प्रान्त एवं अवध प्रान्तीय शाखा के सहमन्त्री नियुक्त हुए। सन् १८८८ ई० के दिसम्बर के महीने में कांग्रेस का चौथा वार्षिक अधिवेशन इलाहाबाद में हुआ। प्रान्त की राजधानी उस समय इलाहाबाद ही थी। कांग्रेस की स्वागत समिति में मालवीयजी को सहायक मन्त्री के रूप सम्मिलित किया गया था। उस हैसियत से उन्होंने कांग्रेस के एक महत्त्वपूर्ण अधिवेशन को सफल बनाने के लिए जी-तोड़ कर काम किया।

सन् १८८९ में मालवीयजी ने 'हिन्दुस्तान' समाचार पत्र का सम्पादन छोड़ दिया। वे कालाकांकर से इलाहाबाद लौट आये, और वकालत की पढ़ाई करने के लिए वे म्योर सेन्ट्रल कालेज में पुनः भरती हो गये। सन् १८९२ में वकालत की परीक्षा पास करके उन्होंने इलाहाबाद के जिला अदालत में वकालत का काम शुरू किया। दो वर्ष बाद वे हाईकोर्ट में वकालत करने लगे। शीघ्र ही वे बड़े वकीलों की पंक्ति में आ गये। उनकी प्रतिभा, योग्यता, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, शिष्ट व्यवहार आदि के कारण सभी लोग उनका आदर करते थे।

पत्रकारिता में मालवीय जी की रुचि कम नहीं हुई। वकालत की पढ़ाई के साथ-साथ वे अंग्रेजी समाचार पत्र 'इण्डियन यूनियन' में सह-सम्पादक का काम करने लगे। इस समाचार पत्र का प्रकाशन मालवीयजी के गुरु आदित्यराम भट्टाचार्यजी ने प्रारम्भ किया था। तत्पश्चात् उसका भार पण्डित अयोध्यानाथ ने उठा लिया। सन् १८९२ के बाद इसका एकीकरण लखनऊ से प्रकाशित होने वाले 'अड्वोकेट' पत्र के साथ हो गया।

उसके बाद जुलाई १८९९ में अंग्रेजी मासिक पत्र 'हिन्दुस्तान रिव्यू' मालवीयजी के सहयोग से प्रारम्भ हुआ जो २४ अक्टूबर १९०९ से दैनिक समाचार पत्र ''दि लीडर' के नाम से परिवर्तित हो गया। 'दि लीडर' इलाहाबाद से प्रकाशित होता था।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन् १९०७ ई० के प्रारम्भ में वसन्त पञ्चमी के दिन मालवीयजी ने 'अभ्युदय' नामक एक हिन्दी साप्ताहिक का शुभारम्भ किया। दो वर्ष तक उन्होंने स्वयं उसका सम्पादन किया। तदनन्तर उसका भार श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन, श्रीकृष्णकान्त मालवीय आदि धुरंधर विद्वानों ने उठा लिया।

मालवीयजी हिन्दी के उत्थान के लिए सदा प्रयत्नशील रहते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम तीन दशकों में उत्तर प्रदेश में (जो उस समय उत्तर पश्चिमी प्रान्त एवं अवध कहलाता था) हिन्दी एवं नागरी लिपि के प्रयोग के लिए एक जोरदार आन्दोलन चल रहा था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (१८५०-१८८५) ने उसके लिए एक नारा दिया—"निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति का मूल"। सारे प्रान्त में यह उद्घोषणा गूँज रही थी। जुलाई १८९३ में काशी में नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना होते ही इस आन्दोलन को और बल मिला। मेरठ निवासी पण्डित दुर्गादत्त ने अपना सर्वस्व हिन्दी और नागरी लिपि के प्रचार के लिए समर्पित करने का संकल्प कर लिया। वे पहले लोगों को 'जयरामजी की' कहकर अभिवादन करते थे। अब 'जयनागरी की' कहने लगे।

उस समय न्यायालय में सब कार्य अंग्रेजी और उर्दू में ही होते थे। दुर्गादत्तजी ने सोचा कि न्यायालय में भी नागरी लिपि का प्रयोग होना चाहिए। उनके प्रोत्साहन से सन् १८९४ में सरकार को एक निवेदनपत्र भेजा गया और प्रार्थना की गयी कि अदालत के कागजातों में उर्दू लिपि के साथ-साथ नागरी लिपि का भी प्रयोग किया जाय। सरकार ने उस प्रार्थना पर आवश्यक विचार किये बिना ही उसे अस्वीकार कर दिया।

तब मालवीयजी ने उस कार्य को अपने हाथ में लिया। उन्होंने लगभग तीन वर्ष कठिन परिश्रम करके इस विषय से सम्बद्ध ऐतिहासिक तथ्यों को एकत्र किया, सरकारी आँकड़ों को ढूँढ निकाला, नागरी लिपि के सम्बन्ध में प्रसिद्ध पाश्चात्य संस्कृत विद्वान् प्रोफेसर मोनियर विलियम्स, डा० जेम्स् ब्रिग्स्, प्रोफेसर डौसन्, प्रोफेसर ब्लाचमैन, सर आइजैक पिटमैन, चीफ जस्टिस अर्सकिन आदि द्वारा व्यक्त किये गये विचारों का संग्रह किया, और सरकार को देने के लिए एक प्रार्थना पत्र (मेमरेण्डम्) तैयार किया। सभी प्रामाणिक बातों से हिन्दी भाषा की व्यापकता और नागरी लिपि की श्रेष्ठता को सिद्ध करते हुए इस प्रार्थना पत्र में कहा गया

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कि हिन्दी ही उत्तर भारत की भाषा है और इस भाषा को लिखने के लिए नागरी लिपि ही सर्वोत्तम है। अत: हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों का प्रचार 'पश्चिमोत्तर प्रान्त और अवध' में शिक्षा के प्रसार के लिए नितान्त आवश्यक है। अन्त में 'मेमरेण्डम्' में प्रार्थना की गयी कि प्रान्त की जनता की सुविधा को ध्यान में रखते हुए अदालतों में उर्दू लिपि के साथ-साथ देवनागरी लिपि का भी प्रयोग किया जाय।

उक्त प्रार्थनापत्र को मालवीयजी ने प्रयाग के इण्डियन प्रेस में सन् १८९७ में छपवाया। 'मेमरेण्डम्' का शीर्षक था—"Court Character and Primary Education in the North-West Provinces and Oudh".

प्रार्थना पत्र (मेमरेण्डम्) का मुख्य भाग फुल्स्केप (Foolscap) आकार के काग़ज में ६५ पृष्ठों में छपा और परिशिष्ट ३५ पृष्ठों में। एक सौ पृष्ठों का यह महत्त्वपूर्ण दस्तावेज दिसम्बर १८९७ में पूरी तरह तैयार हो गया। केवल गवर्नर साहब को देने का काम बाकी था।

उस समय पश्चिममोत्तर प्रान्त और अवध के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर एण्टनी मेकडानल थे। उनसे मालवीयजी के अच्छे सम्बन्ध थे। फरवरी या मार्च १८९८ में मालवीयजी उनसे मिले और अपने 'मेमरेण्डम्' के बारे में उन्हें बतलाया। मेकडानल साहब ने मालवीयजी को सलाह दी कि वे कुछ समय के लिए रुके रहें, उपयुक्त समय देखकर ही अपना 'मेमरेण्डम्' समर्पित करें।

मालवीयजी उपयुक्त समय की प्रतीक्षा करते रहे। एक वर्ष बीत जाने पर २ मार्च सन् १८९९ को अयोध्यानरेश महाराजा प्रताप नारायण सिंह, माण्डा के राजा रामप्रसाद सिंह, आवागढ़ के राजा बलवन्त सिंह, डा० सुन्दर लाल और मालवीयजी का एक डेपुटेशन लेफ्टिनेण्ट गवर्नर सर एण्टनी मेकडानल से मिला। डेपुटेशन की ओर से मालवीयजी ने अपना प्रार्थनापत्र (मेमरेण्डम्)* सर एण्टनी को समर्पित किया और उन्होंने

---

* सर एण्टनी मेकडानल को मालवीयजी द्वारा समर्पित यह ऐतिहासिक दस्तावेज़ अब लन्दन में इण्डिया आफिस के अभिलेखागार (Archives) में सुरक्षित है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रार्थनापत्र पर विचार करने का वादा किया। सरकारी कार्यवाही में एक वर्ष का समय लग गया। उसके बाद १४ अप्रैल १९०० को सरकार के निर्णय की घोषणा हुई। अदालतों में उर्दू लिपि के साथ नागरी लिपि के चलन की आज्ञा कर दी गयी। मालवीयजी की यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी।

इस उपलब्धि के बाद मालवीयजी के मन में यह विचार आया कि भारत के विविध प्रान्तों से शिक्षा प्राप्त करने के निमित्त प्रयाग आने वाले हिन्दू विद्यार्थियों के लिए एक बड़े, उपयुक्त और सुविधाजनक बोर्डिंग हाउस (भोजन व्यवस्थायुक्त छात्रावास) का होना नितान्त आवश्यक है जहाँ रहकर वे विद्योपार्जन के साथ-साथ सनातन धर्म के आधारभूत सिद्धान्तों का यथार्थ ज्ञान भी प्राप्त कर सकें। विचार आते ही वे इस कार्य में प्रवृत्त हो गये। ले० गवर्नर सर एण्टनी मेकडानल का उन्हें सहयोग प्राप्त हो गया। छात्रावास के निर्माण के लिए सरकार की ओर से एक लाख रुपये की सहायता मिल गयी। मालवीयजी ने प्रान्त में घूम-घूम कर चन्दा भी एकत्र किया।

छात्रावास की आधारशिला २७ जुलाई १९०१ को रखी गयी। छात्रावास का निर्माण दो वर्ष के अन्दर पूरा हो गया। उसका नाम मेकडानल यूनिवर्सिटी हिन्दू बोर्डिंग हाउस रखा गया। इसमें २३० विद्यार्थियों के रहने की व्यवस्था थी। जुलाई १९०३ से विद्यार्थी लोग इसमें रहने लगे। साधारण जनता इस छात्रावास को "मालवीयजी बोर्डिंग हाउस' ही कहती थी। वास्तव में उन्हीं के प्रयास से ही तो इस छात्रावास का निर्माण हुआ था। मालवीयजी के कथनानुसार इसके निर्माण में कुल ढाई लाख रुपयां लगा, जिसमें एक लाख रुपयां सरकार ने दिया, बाकी चन्दे से जमा हुआ धन था।

इस छात्रावास में म्योर सेन्ट्रल कालेज के विद्यार्थियों के अलावा प्रयाग के अन्य कालेजों में पढ़ने वाले विद्यार्थी भी रहते थे। शुद्ध वातावरण में सात्विक रहन-सहन, सात्विक आहार और सात्विक विचार के साथ पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए यह 'बोर्डिंग हाउस' मालवीयजी का एक वरदान था।

अपने विद्यार्थी जीवन में ही मालवीयजी ने प्रयाग में समाज सेवा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कार्य प्रारम्भ कर दिया था। तब से लगभग बीस वर्षों में उन्होंने समाज कल्याण के लिए जो कुछ किया उससे सारे नगर में उनकी कीर्ति फैल गयी। इलाहाबाद नगरवासियों की प्रबल इच्छा थी कि वे नगरपालिका के सदस्य बनकर नगर की व्यवस्था में भी सक्रिय भाग लें। सन् १९०० में वे इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड के सदस्य चुन लिये गये। उनकी यह सदस्यता सन् १९१६ तक बनी रही। इस बीच तीन वर्ष उन्हें म्युनिसिपल बोर्ड के अध्यक्ष-पद का भार भी संभालना पड़ा। उनके जीवन का एक मुख्य लक्ष्य था–जनता की सेवा और दुःख से तप्त प्राणियों के दुःखों को दूर करना। प्रयाग की जनता की पीड़ा को दूर करने के लिए वे रात दिन प्रयत्नशील रहते रहे। सन् १९००-१९०२ के बीच प्रयाग में एक महामारी फैल रही थी। उस अवसर पर मालवीयजी ने अपने स्वास्थ्य की चिन्ता छोड़ कर, घर-घर जाकर पीड़ितों को अस्पताल पहुंचाया, जो निरोग थे उन्हें सुरक्षित स्थानों पर भेजा, सब घरों में कीटाणुनाशक दवा छिड़कवायी, और जो निराश्रित हो गये थे, उनके भोजन और आवास की व्यवस्था की। प्रयाग की जनता उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करती थी।

उन दिनों में म्युनिसिपल बोर्ड की सदस्यता का बहुत महत्त्व था। प्रान्त के म्युनिसिपल बोर्डों द्वारा चुने गये सदस्य ही प्रान्तीय विधान-परिषद् (Provincial Legislative Council) के सदस्य बनते थे। प्रान्तीय विधान-परिषद् के गैरसरकारी सदस्य, भारतीय विधान परिषद् (Imperial Legislative Council) के लिए दो सदस्य मनोनीत करते थे। अर्थात् लोग म्युनिसिपल बोर्ड द्वारा ही प्रान्तीय विधान-परिषद् एवं भारतीय विधान परिषद् पहुँच सकते थे।

सन् १९०२ ई० में इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड ने प्रान्तीय विधान-परिषद् की सदस्यता के लिए मालवीयजी को चुना। उस समय प्रान्तीय विधान-परिषद के सदस्य का कार्यकाल दो वर्ष का होता था। सन् १९०४, १९०६ एवं १९०८ में भी इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड ने मालवीयजी का ही पुनर्निर्वाचन किया। इसकी अवधि सन् १९१० में समाप्त हुई। सन् १९१० में भी मालवीयजी पुनर्निर्वाचित हुए। उस समय सम्बद्ध अधिनियम में संशोधन हो गया था। विधान-परिषद् के सदस्य का कार्यकाल दो वर्ष से तीन वर्ष कर दिया गया था। अतः मालवीयजी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रान्तीय विधान-परिषद् को सन् १९१३ तक अलंकृत करते रहे।

इस बीच सन् १९१० में प्रान्तीय विधान परिषद् ने उन्हें भारतीय विधान परिषद् (Imperial Legislative Council) के लिए मनोनीत किया। लगातार ग्यारह वर्ष प्रान्तीय विधान-परिषद में और उसके बाद भारतीय विधान परिषद् में देश हित के सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर मालवीयजी का जोरदार भाषण होता था। विधान-परिषदों में उस समय सभी भाषण अंग्रेजी में होते थे। अंग्रेजी में मालवीयजी के भाषण को सुनने के लिए अंग्रेज भी लालायित रहते थे। Silver-tongued orator के नाम से वे प्रसिद्ध हो गये थे। भाषण कला में सभी लोग उनका लोहा मानते थे।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२

कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन प्रतिवर्ष दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में भारतवर्ष के विभिन्न नगरों में होता था। मालवीयजी सभी अधिवेशनों में सम्मिलित होते थे। विशाल भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न प्रान्तों को उन्होंने अच्छी तरह देखा। प्राचीन भारत के गौरवशाली इतिहास का उन्होंने पूर्ण निष्ठा के साथ अध्ययन किया था। श्रीमद्भागवत में वर्णित सांदीपनि मुनि का गुरुकुल और उसमें शिक्षा ग्रहण कर रहे श्रीकृष्ण और सुदामा का अपूर्व चित्र सदा उनके सामने आ जाता था। गुरुकुलों में किस तरह के वातावरण में विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे, गुरु और शिष्य के बीच कैसा सुन्दर सम्बन्ध था, शिष्यों के बीच परस्पर कैसा शुद्ध प्रेम था, इन सबका स्मरण कर वे आनन्द में डूब जाते थे।

उन्होंने निश्चय किया कि इस महान् भारतदेश को पुनः एक सूत्र में बाँधने के लिए भारत की सांस्कृतिक राजधानी काशी में प्राचीन भारत के गुरुकुलों के सदृश एक विश्वविद्यालय की स्थापना करनी चाहिए जिसमें प्राचीन भारतीय विद्याओं की शिक्षा के साथ-साथ, भारतीय भाषा के माध्यम से आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा भी दी जाय।

सन् १९०४ ई० में काशी में तत्कालीन काशीनरेश प्रभुनारायण सिंह की अध्यक्षता में 'मिण्ट हाउस' में आयोजित एक सभा में मालवीयजी ने काशी विश्वविद्यालय की अपनी योजना को विद्वानों के सम्मुख रखा। काशीनरेश सहित उपस्थित सभी लोगों ने प्रस्तावित विश्वविद्यालय का स्वागत करते हुए मालवीयजी को प्रोत्साहित किया। शीघ्र ही मालवीयजी ने भावी विश्वविद्यालय का विवरणपत्र तैयार कर लिया और उन्होंने उसकी मुद्रित प्रति भारत के सभी गण्यमान्य सज्जनों को विचारार्थ अक्टूबर १९०५ में डाक द्वारा भेज दी।

दिसम्बर १९०५ के अन्तिम सप्ताह में कांग्रेस का इक्कीसवाँ वार्षिक अधिवेशन काशी में होनेवाला था। इस अधिवेशन के लिए श्रीगोपालकृष्ण गोखले अध्यक्ष चुने गये थे। कांग्रेस का यह अधिवेशन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था, कारण था बंगाल का विभाजन। लार्ड कर्ज़न ने (जो सन् १८९९ से भारत के वाइसराय थे) १९०५ के प्रारम्भ में बंग-विभाजन की योजना बनायी। आम जनता की भावनाओं को इससे बहुत ठेस पहुँची। इस योजना का पूरे देश में विशेषकर बंगाल में जोरदार विरोध हुआ। परन्तु २० जुलाई १९०५ को लार्ड कर्ज़न ने विभाजन की घोषणा कर दी। दिसम्बर १९०५ में आयोजित कांग्रेस के अधिवेशन में यही मुख्य विचाराधीन विषय था। अतः विभिन्न प्रान्तों के सभी जाने-माने कांग्रेस के सदस्य इस अधिवेशन में सम्मिलित हुए।

इस कांग्रेस की स्वागत समिति में मालवीयजी भी एक सदस्य थे। समिति के अध्यक्ष काशी के एक प्रसिद्ध नागरिक राजा मुंशी माधो लाल थे, परन्तु मालवीयजी ने समिति का सारा कार्यभार अपने ऊपर ले रखा था।

इस शुभ अवसर का लाभ उठाते हुए मालवीयजी ने ३१ दिसम्बर १९०५ को वाराणसी के टाउनहाल में एक सभा का आयोजन किया। कांग्रेस अधिवेशन के लिए आये हुए सभी प्रमुख लोग इस सभा में सम्मिलित हुए। श्री बी०एन्० महाजन की अध्यक्षता में सभा हुई। मालवीयजी द्वारा बनाया गया प्रस्तावित विश्वविद्यालय का विवरण-पत्र (First Prospectus), उपस्थित सभी सज्जनों को दो महीने पूर्व ही मिल गया था। उसी विवरण-पत्र के आधार पर सभा में चर्चा हुई। मालवीयजी ने विवरण-पत्र में उल्लिखित विषयों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि "भारत के प्रांचीन धर्म की शिक्षा है कि प्रत्येक मनुष्य अपने को एक बड़ी समष्टि की इकाई समझ कर उसके हित के लिए जीवित रहे और काम करे, लोक कल्याण तथा लोक संग्रह को परम पुरुषार्थ समझे।" "धर्म निर्धारित करता है कि लौकिक और पारलौकिक सिद्धि, दोनों के लिए प्रयत्न करना मानव का कर्तव्य है।" "हमारे ऋषियों द्वारा प्रतिपादित नैतिकता में उन सब गुणों का समावेश है जो मानव समाज के अस्तित्व और मैत्रीपूर्ण सहयोग के लिए आवश्यक है।" "लौकिक अभ्युदय के लिए आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन और प्रयोग भी अत्यन्त आवश्यक हैं, उनकी समुचित शिक्षा होनी चाहिए। देश में विज्ञान का व्यापक प्रसार और प्रयोग होना चाहिए। यह तभी सम्भव है जब आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही हो ।''

सभा में उपस्थित सभी सज्जनों ने मालवीयजी के प्रयास की सराहना करते हुए उनको अपना परिपूर्ण समर्थन दिया । 'पाइओनियर' (Pioneer) समाचार पत्र ने प्रस्तावित विश्वविद्यालय के समर्थन में एक अग्रलेख लिखा । 'इण्डियन रिव्यू' (Indian Review) में भी प्रस्तावित विश्वविद्यालय की योजना को महत्त्वपूर्ण, देश-भक्तिपूर्ण और प्रेरणाप्रद बताते हुए एक सुन्दर लेख प्रकाशित हुआ । सर्वत्र मालवीयजी की प्रशंसा हुई ।

परन्तु वंग-विभाजन के कारण देश का वातावरण पूर्णरूपेण अशान्त हो गया था । अत: मालवीयजी की योजना को तुरन्त कार्यान्वित करना सम्भव नहीं हो सका । उपयुक्त समय की प्रतीक्षा करते हुए मालवीयजी अपनी योजना के सम्बन्धं में सुप्रसिद्ध विद्वानों और वैज्ञानिकों से विचार विमर्श कर रहे थे । कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों में भी भारत के गण्यमान्य शिक्षाविदों से इस सम्बन्ध में विस्तृत वार्तालाप करने का सुअवसर उन्हें मिल जाता रहा ।

कांग्रेस का २४वाँ वार्षिक अधिवेशन लाहौर में दिसम्बर १९०९ के अन्त में होने वाला था । इस अधिवेशन की अध्यक्षता के लिए मालवीयजी चुने गये । सन् १९०९ में ब्रिटिश पार्लमेंट ने इण्डियन कौंसिल एक्ट पास किया और इसके अधीन अधिनियम (रेगुलेशन) बनाये गये । मार्ले-मिन्टो-सुधारों के नाम से प्रसिद्ध इस व्यवस्था में केन्द्रीय और प्रान्तीय लेजिस्लेटिव कौंसिलों (विधान परिषदों) में गैर-सरकारी अतिरिक्त सदस्यों की संख्या बढ़ा दी गयी । कौंसिलों के अधिकार भी विस्तृत कर दिये गये । निर्वाचित स्थानों में से अधिकांश को साम्प्रदायिक और आर्थिक हितों के आधार पर बाँट दिया गया । मुसलमानों को प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा पृथक् प्रतिनिधित्व दे दिया गया और उन्हें सामान्य स्थानों में भी चुनाव लड़ने का अधिकार दिया गया । मताधिकार किसी व्यापक सिद्धान्त पर आधारित नहीं था । विभिन्न प्रान्तों तथा विभिन्न सम्प्रदायों के लिए मताधिकार की शर्तें भिन्न-भिन्न थीं ।

कांग्रेस के उपर्युक्त अधिवेशन में 'मार्ले-मिन्टो सुधार' व्यवस्था के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करना ही मुख्य विषय था । अपने सारगर्भित अध्यक्षीय भाषण में मालवीयजी ने नयी सुधार व्यवस्था की कड़ी आलोचना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की । "सम्प्रदाय और सम्पत्ति पर आधारित निर्वाचन पद्धति" का विरोध करते हुए उन्होंने कहा कि प्रान्तीय कौंसिल की सदस्यता के लिए निर्वाचन, सदस्य की योग्यता पर होना चाहिए । शास्त्रों में विद्या सबसे ऊँची योग्यता मानी गयी है और धन का स्वामित्व सबसे नीची जब कि नये अधिनियमों में विद्या को, योग्यता की श्रेणी से निकाल ही दिया गया है । मध्यवर्गीय शिक्षित वर्ग के साथ यह एक अन्याय है ।

मालवीयजी ने अपने भाषण में स्पष्ट रूप से सिद्ध कर दिया कि सरकार का रुख एक वर्ग के प्रति पक्षपातपूर्ण और अन्यों के प्रति अन्यायपूर्ण है । नयी सुधार व्यवस्था की निन्दा करते हुए कांग्रेस के अधिवेशन में सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव स्वीकार किया गया । अन्य मुख्य विषयों पर भी प्रस्ताव पारित करने के बाद अधिवेशन का समापन हुआ ।

गांधीजी का संदेश

कांग्रेस के इस अधिवेशन के समय कांग्रेस अध्यक्ष मालवीयजी के नाम से गांधीजी ने दक्षिण अफ्रिका के ट्रांन्स्वाल शहर से समुद्री तार (केबिल) द्वारा एक सन्देश भेजा था । उसमें उन्होंने सत्याग्रह के सिद्धान्त और उनकी सर्वश्रेष्ठ क्षमता का विस्तृत विवेचन करते हुए कहा था कि हमारा देश ही अत्यन्त प्राचीन अधिकांश धार्मिक मतों का संवर्धन स्थान रहा है । एक मात्र सत्याग्रह रूपी अस्त्र ही हमारे देशवासियों के स्वभावानुसार उपयुक्त है । हमें आधुनिक सभ्यता से बहुत कम सीखना है ।

मालवीयजी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में उल्लेख किया था कि "दक्षिण अफ्रिका में भारतीयों को जो अपमान और कष्ट सहन करने पड़ रहे हैं, उनसे सारे देश में, हर वर्ग के लोगों में रोष और शोक की गहरी भावनाएँ उत्तेजित हुई हैं । जिस निर्भीक साहस और अनन्य दृढ़ता से गांधीजी और उनके साथी भारत की प्रतिष्ठा के लिए संघर्ष कर रहे हैं, वह अवश्य ही अत्यन्त प्रशंसनीय है । हमारी सहानुभूति उनके साथ है ।" इन्हीं भावनाओं को व्यक्त करते हुए मालवीयजी ने गांधीजी को एक केबिलग्राम भेजा और उनकी प्रशंसा करते हुए उन्हें सूचित किया कि कांग्रेस की ओर से उन्हें निधि भी भेजी जा रही है ।

कांग्रेस के नियमानुसार जो सज्जन वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता करते थे, वे ही अगले अधिवेशन के पूर्व तक कांग्रेस के अध्यक्ष होते थे । अतः

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन् १९१० के प्रारम्भ से अन्त तक कांग्रेस के अध्यक्ष का कार्यभार मालवीयजी को ही संभालना पड़ा। वे इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड के सदस्य और प्रान्तीय विधान परिषद् के सदस्य भी थे। सन् १९१० में प्रान्तीय विधान परिषद् द्वारा निर्वाचित होकर वे केन्द्रीय विधान कौंसिल (Imperial Legislative Council) के सदस्य भी बने। इस प्रकार उनका कार्यभार बढ़ता ही जा रहा था। इस बीच उन्हें इलाहाबाद के उच्च न्यायालय में वकालत का कार्य भी देखना पड़ता था। अच्छी खासी वकालत थी। बहुत बड़े-बड़े वकीलों में उनकी गिनती होती थी।

इतनी व्यस्तता के मध्य में भी मालवीयजी का ध्यान काशी में प्रस्तावित विश्वविद्यालय-योजना की ओर से क्षणभर भी हटा नहीं। अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए वे उपयुक्त समय की प्रतीक्षा कर रहे थे। केन्द्रीय विधान कौंसिलके सदस्य की हैसियत से उन्हें ज्ञात हुआ कि देश की राजनीतिक स्थिति शीघ्र ही सामान्य हो जायगी। उन्होंने निश्चय किया कि कांग्रेस के अध्यक्ष पद के भार से मुक्त होते ही विश्वविद्यालय के काम में पूर्णत: लग जाना चाहिए। इस निश्चय पर पहुँचते ही एक शुभ मुहूर्त में उन्होंने त्रिवेणी के पवित्र तट पर दृढ़ता पूर्वक विधिवत् सङ्कल्प किया कि वे काशी विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए एवं देश सेवा के लिए अपना जीवन समर्पित कर देंगे।

कांग्रेस का अगला अधिवेशन इलाहाबाद में दिसम्बर १९१० के अन्त में होने वाला था। तीसरी बार इलाहाबाद को कांग्रेस का आतिथेय करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। कांग्रेस अपने अस्तित्व का पच्चीसवाँ वर्ष पूरा कर रहा था। अत: मालवीयजी ने निश्चय किया कि इस अधिवेशन को रजत जयन्ती के ढंग पर मनाना चाहिए। अधिवेशन के लिए सारा प्रबन्ध बड़े पैमाने पर किया गया। लगभग चार हजार प्रतिनिधि और अतिथिगण इस अधिवेशन में भाग लेने के लिए प्रयाग आने वाले थे। इस हेतु इलाहाबाद के ऐतिहासिक किले के समीप एक विशाल पण्डाल का निर्माण हुआ। इस पण्डाल में पच्चीस द्वार थे जिनके ऊपर गत अधिवेशनों के अध्यक्षों के अलंकृत चित्र सुशोभित हो रहे थे। सर विलियम वेडर्नबर्न इस अधिवैशन के अध्यक्ष चुने गये थे। सुन्दरलालजी स्वागत समिति के अध्यक्ष थे, मोतीलाल नेहरू उपाध्यक्ष। अधिवेशन को सफल बनाने के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिए सभी प्रयास जोरदार ढंग से चल रहे थे। परन्तु इसी बीच मालवीयजी के लिए एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना हो गयी। ९ नवम्बर १९१० को उनके पिताजी का निधन हो गया। नवम्बर के अन्त तक वे प्रबन्ध कार्य में भाग नहीं ले सके।

कांग्रेस का यह अधिवेशन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। दिसम्बर १९१० के अन्तिम सप्ताह में पूरा शहर महोत्सवमय हो गया था। अधिवेशन अपेक्षा से अधिक ही सफल रहा। अधिवेशन के समाप्त होते ही मालवीयजी त्रिवेणी तट पर किये गये सङ्कल्प को पूर्ण करने के लिए उद्यत हो गये। उन्होंने विश्वविद्यालय की अपनी संशोधित योजना को छपवाकर उसे जुलाई १९११ में प्रकाशित कर दिया। संशोधित योजना की प्रति, उन्होंने अपने व्यक्तिगत पत्र के साथ उन सभी सज्जनों को भेज दिया जिन्हें सन् १९०५ में प्रथम विवरण पत्र (First Prospectus) भेजा गया था। इसीके साथ उन्होंने १५ जुलाई सन् १९११ को जनता के नाम एक अपील भी जारी कर दी जिसमें उन्होंने जनता से एक करोड़ रुपये की मांग की और भारत के सभी लोगों से अनुरोध किया कि काशी विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए यथाशक्ति दान दें। उन्होंने वकालत त्याग दी, और भिक्षापात्र लेकर वे निकल गये जनता से भिक्षा माँगने[१]।

मालवीयजी के पूज्य तपस्वी पिताजी ने कुछ वर्ष पूर्व ही काशी में विश्वनाथजी को चढ़ा कर १०१ रुपये उन्हें विश्वविद्यालय के लिए विश्वनाथ के प्रसाद के रूप में दिया था। मालवीयजी के ध्यान में यह बात आ गयी कि काशी में अन्नपूर्णाजी के मन्दिर में विश्वनाथजी जगन्माता अन्नपूर्णाजी के पार्श्व में खड़े, हाथ में भिक्षापात्र लिये उनसे भिक्षा माँग रहे हैं। पिताजी से १०१ रुपये विश्वनाथजी के प्रसाद के रूप में मिलते ही मालवयीजी को प्रेरणा मिल गयी कि जनता रूपी माता से भिक्षा माँगने से ही भिक्षापात्र

---

१. नौ वर्ष की अवस्था में यज्ञोपवीत होते ही मालवीय जी ने झोली लेकर माताओं से कहा था—'भवति भिक्षां देहि' ! वह दृश्य अभी उनके नेत्रों के सामने आ गया। प्राचीन काल के गुरुकुलों में भी ब्रह्मचारी विद्यार्थियों को प्रतिदिन घर-घर जाकर माताओं से भिक्षा माँगकर लाना पड़ता था। काशी में तो भक्तलोग अन्नपूर्णा जी की स्तुति करते हुए प्रार्थना करते हैं—भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी मातान्नपूर्णेश्वरी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अक्षयपात्र बना रहेगा। मालवीयजी जैसे चरित्रवान्, विद्वान्, तपस्वी देशभक्त को भिक्षा कौन नहीं देता ? विशेषकर जब वह भिक्षा, देश की जनता के लिए ही एक विश्वविद्यालय की स्थापना के निमित्त माँग रहे थे।

यहाँ श्रीमती एनी बेसंट और उनके द्वारा सन् १८९८ में काशी में स्थापित सेन्ट्रल हिन्दू कालेज़ का उल्लेख आवश्यक है। सात-आठ वर्षों के अन्दर ही सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की ख्याति सम्पूर्ण भारतवर्ष में फैल गयी। अनेक त्यागी विद्वान् देशभक्त, केवल भारतीय ही नहीं, अंगरेज भी, सेन्ट्रल हिन्दू कालेज में निःस्वार्थ सेवा कर रहे थे।

धीरे-धीरे श्रीमती एनी बेसंट के मन में यह विचार पनपने लगा कि काशी में भारत का एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय होना चाहिए जिसमें सभी भारतवासियों का सहयोग हो। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उन्होंने देश के विभिन्न वर्गों के लोगों से सम्पर्क स्थापित किया। उनकी भावनाओं का स्वागत करते हुए सभी मतावलम्बियों ने उनसे सहयोग करने का वचन दिया। तदुपरान्त श्रीमती एनी बेसंट ने 'यूनिवर्सिटी आफ इण्डिया' के नाम से काशी में एक विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए, उस विश्वविद्यालय के स्वरूप, उद्देश्य, अधिकार, प्रबन्ध सम्बन्धी नियमावली आदि विधिवत् तैयार किया। इस विश्वविद्यालय के संचालन के लिए प्रस्तावित प्रथम न्यास मण्डल (Board of Trustees) में उन्होंने भारत के गण्यमान्य, सुप्रसिद्ध एवं प्रबुद्ध सज्जनों को रखा। न्यासियों की कुल संख्या अठारह थी, जिसमें थे—एक थिऑसफिस्ट (ब्रह्मविद्यावादी), नौ हिन्दू, तीन मुस्लिम, दो पारसी, एक सिख, एक बौद्ध और एक जैन। सभी सम्बद्ध सज्जनों की सम्मति उन्होंने ले ली थी।

श्रीमती बेसंट ने सोचा कि इस विश्वविद्यालय की योजना को कार्यान्वित करने के लिए ब्रिटिश सरकार से आज्ञापत्र प्राप्त करना आवश्यक होगा। अतः उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य के अधिपति सम्राट् पञ्चम जार्ज को भेजने के लिए एक आवेदन पत्र तैयार किया और उसे आज्ञापत्र के प्रारूप सहित भारत के वाइसराय महोदय को भेजा। सितम्बर १९१० में वाइसराय ने उसे ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के भारत-मन्त्री को अग्रसारित कर दिया। फाइल लन्दन और दिल्ली के बीच घूम रही थी।

इधर भारत में एक दूसरा चित्र उभर रहा था। अलीगढ़ में सन् १८७५ में सर सैयद अहमद खाँ द्वारा स्थापित मोहेम्मडन एन्ग्लो वर्नाकुलर कालेज के प्रबन्धक लोग सन् १८९८-१८९९ से ही उस कालेज को केन्द्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मानकर एक मुस्लिम विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए प्रयत्नशील थे। सन् १९११ के प्रारम्भ में आगा खाँ के नेतृत्व में मुसलमानों के एक डेपुटेशन ने भारत सरकार के अधिकारियों से मिलकर, अलीगढ़ में मुस्लिम यूनिवर्सिटी के लिए चार्टर (आज्ञापत्र) प्रदान करने की प्रार्थना की। सरकार के आश्वासन से उन्हें अपेक्षित प्रोत्साहन मिला। इसका परिणाम यह हुआ कि जो तीन मुस्लिम सज्जन श्रीमती बेसंट की योजना में सहयोग कर रहे थे, उन तीनों ने उनको सूचित कर दिया कि वे उनकी योजना में सम्मिलित नहीं हो सकेंगे। तब श्रीमती बेसंट को अपनी योजना में कुछ आवश्यक संशोधन करना पड़ा। संशोधित योजना में उन्होंने विश्वविद्यालय का नाम 'यूनिवर्सिटी आफ इण्डिया' से बदल कर 'यूनिवर्सिटी आफ बनारस' और हिन्दी में 'काशी विश्वविद्यालय' रखा।

मार्च १९११ में मालवीयजी और श्रीमती बेसंट की एक बैठक कलकत्ते में हुई। 'काशी विश्वविद्यालय' के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा हुई और दोनों ने इस विश्वविद्यालय के लिए मिलकर कार्य करने का निश्चय किया। अन्य प्रमुख सज्जनों से भी इस विषय में परामर्श करना आवश्यक समझा गया। अत: इलाहाबाद में ८ अप्रैल १९११ को एक गोष्ठी आयोजित हुई। गोष्ठी में विश्वविद्यालय की स्थापना के सम्बन्ध में सभी आवश्यक विषयों पर विचार-विमर्श हुआ। अन्त में निर्णय हुआ कि श्रीमती बेसेंट द्वारा ब्रिटिश सम्राट् पंचम जार्ज को भेजे गये आवेदन पत्र को संशोधित कर लिया जाय और उसी के आधार पर आगे की कार्यवाही की जाय। गोष्ठी में विनिश्चित सभी संशोधनों को तुरन्त लिपिबद्ध करा लिया गया और श्रीमती बेसंट ने ११ अप्रैल १९११ को एक परिपत्र द्वारा सभी सम्बद्ध लोगों को इन संशोधनों से अवगत करा दिया। दैनिक समाचार पत्र और साप्ताहिक पत्रों में भी इस परिपत्र को प्रकाशित करा दिया गया।

श्रीमती एनी बेसंट २२ अप्रैल १९११ को बम्बई से समुद्री जहाज द्वारा इंगलैंड के लिए रवाना हो गयीं। वहाँ लगभग पाँच महीने रहकर ब्रिटिश सरकार से आज्ञापत्र (Charter) लेने के लिए प्रयत्नशील थीं। परन्तु उनके सारे प्रयास विफल हो गये। निराश होकर इंगलैंड़ से चलीं और २१ अक्टूबर १९११ को वे काशी पहुँच गयीं।

श्रीमती बेसंट के प्रवासकाल में भारत में मालवीयजी चुप नहीं बैठे थे। जुलाई १९११ के प्रारम्भ में उन्होंने काशी विश्वविद्यालय की अपनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संशोधित योजना को प्रकाशित कर दिया, १५ जुलाई को जनता के नाम एक अपील जारी कर दी, भारत की जनता से एक करोड़ रुपये की माँग की और विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए धन संग्रह का कार्य भी प्रारम्भ हो गया।

एक और महत्त्वपूर्ण कार्य भी उन्होंने किया। काशी में कुछ वर्ष पूर्व से ही कुछ संस्कृत के विद्वान् और नागरिक, महाराज दरभङ्गा के तत्त्वावधान में 'शारदा विश्वविद्यालय' के नाम से भारतीय शास्त्रों के अध्ययन के लिए एक उच्चतम संस्थान स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील थे। जुलाई १९११ में मालवीयजी प्रयाग में दरभङ्गा महाराज श्री रामेश्वरसिंहजी से मिले और अपनी योजना के सम्बन्ध में उन्होंने दरभङ्गा नरेश से विस्तृत चर्चा की। दरभङ्गा नरेश ने कहा कि यदि इस योजना के लिए भारत सरकार का समर्थन प्राप्त हो जाय तो वे भी मालवीयजी के साथ मिलकर धन संग्रह के लिए आवश्यक कार्य करेंगे। अगस्त १९११ में दरभङ्गा नरेश इस निमित्त शिमला गये। वहाँ उन्हें जानकारी मिली कि मालवीयजी की योजना पहले से ही सरकार के विचाराधीन है। ११ अक्टूबर १९११ को मालवीयजी और महाराज़ दरभङ्गा, वाइसराय लार्ड हार्डिङ् और भारत सरकार के शिक्षा सचिव सर हारकोर्ट बटलर से मिले। उन्होंने आश्वासन दिया कि कुछ शर्तों के पूर्ण होने पर प्रस्तावित विश्वविद्यालय को सरकारी मान्यता मिल सकती है। १२ अक्टूबर १९११ को ही इस आश्वासन को सर हारकोर्ट बटलर ने एक पत्र पूर्वक महाराज दरभङ्गा को सूचित कर दिया। मालवीयजी की योजना को दरभङ्गा नरेश का परिपूर्ण समर्थन तुरन्त मिल गया और अति उत्साह के साथ उन्होंने पाँच लाख रुपये का एक चेक मालवीयजी के हाथ में रख दिया। (आजकल के रुपये की कीमत के अनुसार देखा जाय तो यह धनराशि पाँच करोड़ से भी अधिक की मानी जायगी।)

२१ अक्टूबर १९११ को श्रीमती बेसंट का काशी में आगमन होते ही मालवीयजी उनसे मिले और उन्होंने उपर्युक्त सारा विवरण विस्तार पूर्वक उन्हें सुनाया। मालवीयजी के रुचिकर वर्णन को श्रीमती बेसंट प्रसन्न चित्त होकर सुनती रहीं, आनन्दमय हो गयीं। ब्रह्मविद्यावादिनीविदुषी एनी बेसंट कुछ क्षणों के लिए परब्रह्म परमेश्वर के ध्यान में मग्न हो गयीं। उनके मुख से निकला—सब कुछ ईश्वरीय वरदान है; उन्हीं की कृपा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आगे का कार्य २२ अक्टूबर को ही प्रारम्भ हो गया। दरभङ्गा नरेश काशी आ गये। विचार-विमर्श हुआ और २८ नवम्बर १९११ को "हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी' के नाम से एक संस्था स्थापित हो गयी। महाराज दरभङ्गा इसके अध्यक्ष चुने गये। सर गुरुदास बेनर्जी, श्रीमती एनी बेसेंट और डाक्टर रासविहारी घोष उपाध्यक्ष चुने गये। डाक्टर सुन्दरलाल को मन्त्री का भार सौंपा गया। बाबू भगवान दास (बाद के भारतरत्न डाक्टर भगवान दास), पण्डित इक्बाल नारायण गुर्टू, पण्डित गोकरण नाथ मिश्र, पण्डित कृष्णराम मेहता और बाबू मंगला प्रसाद संयुक्त मन्त्री नियुक्त हुए। इनको लेकर प्रबन्ध समिति में इकसठ सदस्य थे।

जार्ज पंचम का राज्याभिषेक महोत्सव दिल्ली में १२ दिसम्बर १९११ को आयोजित था। भारत की राजधानी भी दिल्ली हो गयी। इस शुभ अवसर पर बंगाल के विभाजन को भी रद्द कर दिया गया। एक प्रकार से यह कांग्रेस की जीत थी। राज्याभिषेक उत्सव में सम्मिलित होने दिल्ली गये सभी प्रमुख लोग प्रयाग लौट आये। दिल्ली में ही हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी की पहली बैठक हो गयी थी। उसमें निश्चय किया गया था कि सोसाइटी का कार्य अविलम्ब प्रारम्भ कर दिया जाय। तदनुसार १५ दिसम्बर १९११ को हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी का रजिस्ट्रेशन सोसाइटीस् रेजिस्ट्रेशन एक्ट नं० XXI - 1880 के अन्तर्गत हो गया।

विश्वविद्यालय के लिए धन संग्रह का कार्य १५ जुलाई १९११ को ही जोरदार ढंग से आरम्भ हो गया था। तीन महीने के अन्दर ही लगभग ३३ लाख रुपये के वायदे हो गये। हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी के निबन्धन होते ही इस कार्य में तेजी आ गयी। पहली जनवरी १९१२ को नं० ४ कूपर रोड, इलाहाबाद (प्रयाग) में हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी का कार्यालय खुल गया। भारतवर्ष के सभी मुख्य नगरों में धनसंग्रह कार्य को सफलतापूर्वक चलाने के लिए शिष्ट-मण्डल संगठित किये गये। 'हिन्दू यूनिवर्सिटी मूव्मेन्ट' एक देशव्यापी आन्दोलन बन गया। काश्मीर से कन्याकुमारी तक, गुजरात से आसाम तक भारत के प्राचीन गौरव का पुनरुत्थान करने के लिए लोगों में जागर्ति आ गयी। वास्तव में यह आन्दोलन स्वतन्त्रता संग्राम का एक अंग बन गया जिसका नेतृत्त्व कर रहे थे महान् तपस्वी, परम देशभक्त, वाग्मी मदन मोहन मालवीयजी। देश के सभी महाराजा,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राजा, धनवान्, निर्धन, भिखारी सभी लोगों ने इस महायज्ञ में भाग लिया और तन, मन, धन, से यथाशक्ति दान दिया। सर्वत्र भारतमाता की जय, वन्दे मातरम् के गगनचुंबी नाद से आकाश गूंज रहा था।

विश्वविद्यालय के लिए भारत सरकार की मान्यता, निम्नलिखित शर्तों को पूर्ण करने के पश्चात् ही प्राप्त हो सकती थी :-

१. काशी में विश्वविद्यालय के लिए एक उपयुक्त स्थान की प्राप्ति हो जाय;
२. सेन्ट्रल हिन्दू कालेज, विश्वविद्यालय को हस्तांतरित हो जाय;
३. पचास लाख रुपये की स्थायी आरक्षित निधि हो जाय;
४. निर्धारित नीति पर संविधान बन जाय; और एक समिति की रिपोर्ट पर
५. यह निश्चित हो जाय कि सेन्ट्रल हिन्दू कालेज को एक आवासीय एवं शिक्षण विश्वविद्यालय के रूप में विकसित किया जा सकता है।

इन सभी विषयों पर तेजी से प्रगति हो रही थी। मालवीयजी और हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी के कुछ अन्य सदस्यों ने विश्वविद्यालय के लिए उपयुक्त पाँच स्थानों को देखा। सर हारकोर्ट बटलर, संयुक्त प्रान्त के गवर्नर जेम्स मेस्टन और भारत सरकार के शिक्षा विभाग के सचिव मिस्टर शार्प ने २७ जुलाई १९१४ को इन पाँचों स्थानों का निरीक्षण किया और अन्त में निर्णय किया गया कि नगवा में देखी गयी भूमि ही विश्वविद्यालय के लिए सर्वोत्तम होगी। इस भूमि को संगृहीत करने के लिए आवश्यक कार्यवाही अविलम्ब कर दी गयी।

४ मई सन् १९१३ को सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के ट्रस्टियों ने निश्चय किया कि सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के प्रबन्ध को यथाशीघ्र हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी को सुपुर्द कर दिया जाय। एतदर्थ आवश्यक कानूनी कार्यवाहियों को पूर्ण करने में बहुत समय लगा। सब औपचारिकताएँ पूरी होने के बाद २७ नवम्बर १९१४ को सेन्ट्रल हिन्दू कालेज एसोसियेशन को हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी में मिला दिया गया। फलतः सेन्ट्रल हिन्दू कालेज, सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल और रणवीर संस्कृत पाठशाला हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी के अंग बन गये।

उसके बाद विश्वविद्यालय के संविधान के बारे में हिन्दू यूनिवर्सिटी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सोसाइटी में विस्तृत चर्चा हुई और अन्त में २२ मार्च १९१५ को सर हारकोर्ट बटलर ने इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल (विधान सभा) में बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी बिल प्रस्तुत किया। विधान सभा में विचार-विमर्श होने के बाद १ अक्टूबर १९१५ को यह बिल पास हो गया और कानून बन गया। इस अवसर पर विधान सभा में बोलते हुए मालवीयजी ने कहा— .

ज्योति और जीवन का यह केन्द्र जो अस्तित्व में आ रहा है, उन विद्यार्थियों को तैयार करेगा जो ज्ञान में संसार के दूसरे भागों के विद्यार्थियों के समान ही नहीं होंगे, वरन् उत्तम जीवन बिताने में, ईश्वर-भक्ति, देश-प्रेम तथा सम्राट् के प्रति निष्ठा में भी परिशिक्षित होंगे[१]।

वाइसराय लार्ड हार्डिङ् का बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी बिल पास कराने में बड़ा सहयोग था। वे १९१० से भारतवर्ष के गवर्नर-जनरल एवं वाइसराय थे। उनका कार्यकाल ३१ मार्च १९१६ को समाप्त होने वाला था। मालवीयजी चाहते थे कि विश्वविद्यालय का शिलान्यास उन्हीं से कराया जाय। शिलान्यास के लिए ८ फरवरी १९१६ वसन्त पञ्चमी के दिन मुहूर्त देखा गया परन्तु लार्ड हार्डिङ् उस दिन नहीं आ सकते थे। अत: ४ फरवरी १९१६ को शिलान्यास का मुहूर्त निश्चित हुआ। बड़ी तैयारियाँ हुईं। शिलान्यास के लिए आवश्यक भूखण्ड को तुरन्त अधिकृत किया गया। एक सुन्दर छोटे नगर के रूप में उसे सुसज्जित किया गया। एक यज्ञशाला महारुद्रयज्ञ के लिए बनायी गयी। वास्तु पूजा, गायत्री जप, वेद पाठ इत्यादि के लिए भी अलग-अलग मण्डप और वितान बनाये गये। गुरुग्रंथसाहब की पूजा और पाठ के लिए एक विशेष मण्डप निर्मित हुआ। उसी प्रकार जैन मत के अनुसार पूजा पाठ का प्रबन्ध हुआ। महारुद्र यज्ञ और अन्य सभी धार्मिक कार्यक्रम वसन्त पञ्चमी के पन्द्रह दिन पूर्व ही

---

१. महामना मालवीयजी सन् १९०२ से (यू.पी.) प्रान्तीय विधान परिषद् के सदस्य थे। सन् १९१० में वहाँ से निर्वाचित होकर वे साम्राज्यिक विधान सभा (Imperial Ligislative Council) के सदस्य बने। सन् १९२० तक वे उसके सदस्य बने रहे। लेजिस्लेटिव कौंसिल, असेम्बली बनने के बाद सन् १९२३ ई० में मालवीयजी इलाहाबाद-झांसी निर्वाचन क्षेत्र से Imperial Legislative Assembly के सदस्य निर्वाचित हुए। मार्च १९३० तक वे उसके सदस्य बने रहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(अर्थात् उत्तरायण होते ही) प्रारम्भ हो गये और ८ फरवरी वसन्त पञ्चमी तक होते रहे । वसन्त पञ्चमी को ही यज्ञ की पूर्णाहुति हुई ।

शिलान्यास उत्सव में सम्मिलित होने के लिए भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों से अनेक महानुभाव काशी आये थे । हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, देश सेवक, विभिन्न स्कूलों और कॉलेजों से चुने गये छात्रगण भी इस महोत्सव में सम्मिलित हुए थे । सम्भवतः ब्रिटिश भारत में ऐसा सुन्दर दृश्य कभी न दिखाई दिया होगा । समस्त भारत की जनता के पूर्ण सहयोग से, जनता की सेवा के लिए जनता द्वारा ही संचालित होने वाला एक अखिल भारतीय आवासी विश्वविद्यालय का शिलान्यास होने वाला था । अतः सर्वत्र आनन्द का ही वातावरण था । महोत्सव-मण्डप में जाने के लिए पाँच ढंग के टिकट थे—सफेद, नीले, पीले, हरे और लाल । लाल रंग का टिकट महिलाओं के लिए था । सारी योजना मालवीयजी के नेतृत्व में सोच-समझकर बनायी गयी थी ।

४ फरवरी १९१६ शुक्रवार—साढ़े ग्यारह बजे तक सभी लोग अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये । वाइसराय महोदय ठीक बारह बजे सभा मण्डप में पधारे । सर्वप्रथम राष्ट्रीय गान हुआ । तत्पश्चात् सेन्ट्रल हिन्दू बालिका विद्यालय की बालिकाओं ने गणपति और सरस्वती देवी की स्तुति की । तब महामहोपाध्याय पण्डित शिवकुमार शास्त्री ने कार्य की सफलता के लिए स्वस्ति-वाचन किया । उसके बाद हिन्दू यूनिवर्सिटी सोसाइटी के अध्यक्ष महाराज दरभङ्गा ने अपना भाषण पढ़ा और वाइसराय एवं गवर्नर जनरल लार्ड हार्डिङ् से शिलान्यास करने की प्रार्थना की ।

वाइसराय लॉर्ड हार्डिङ् का भाषण अत्यन्त सारगर्भित था जिसमें उन्होंने कहा—"धार्मिक शिक्षा की नींव तथा धार्मिक वातावरण के संतुलित प्रभाव के बिना, मानसिक और नैतिक संयम सम्भव नहीं है । केवल प्राध्यापकों के आदर्श जीवन और उपदेश इसमें सफल नहीं हो सकते हैं । खिसकती हुई रेत पर निर्माण नहीं हो सकता । मेरा अपना दृढ़ विश्वास है कि धर्म-शिक्षा-विहीन शिक्षा निरर्थक है ।"

अपना भाषण समाप्त करने के पश्चात् वाइसराय लॉर्ड हार्डिङ् मध्यस्थ मंच की ओर गये और नन्हीं-नन्हीं बालिकाओं की पुष्प वर्षा के बीच उन्होंने शिलान्यास संस्कार सम्पन्न किया । शिलान्यास स्थल के ऊपर लगे संगमरमर पर उत्कीर्ण हुआ था—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

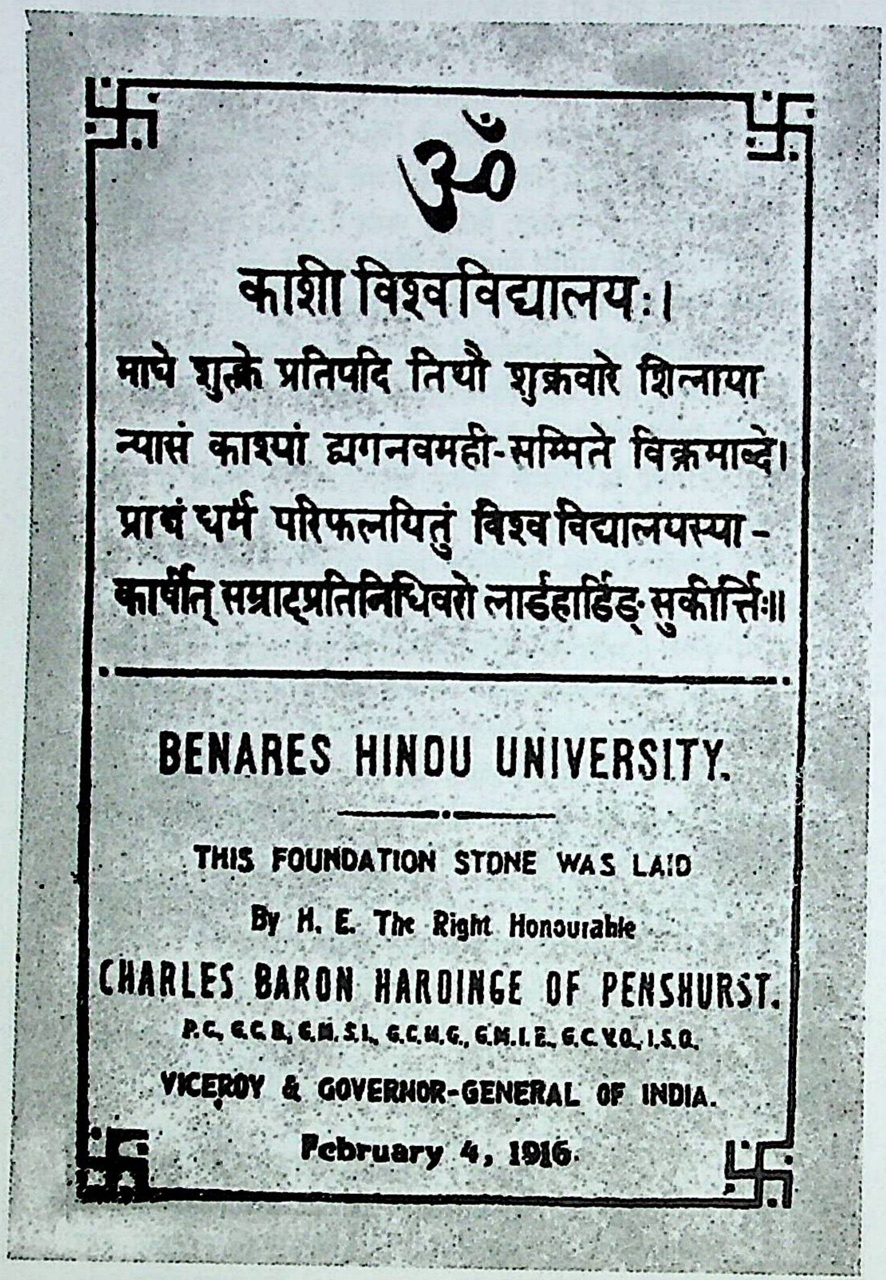
ॐ

काशी विश्वविद्यालयः।

माघे शुक्ले प्रतिपदि तिथौ शुक्रवारे शिलाया
न्यासं काश्यां द्व्यगनवमही-सम्मिते विक्रमाब्दे।
प्राच्यं धर्मं परिफलयितुं विश्वविद्यालयस्या-
कार्षीत् सम्राट्प्रतिनिधिवरो लार्डहार्डिङ् सुकीर्त्तिः॥

BENARES HINDU UNIVERSITY.

THIS FOUNDATION STONE WAS LAID

By H. E. The Right Honourable

CHARLES BARON HARDINGE OF PENSHURST.

P.C., G.C.B., G.M.S.I., G.C.M.G., G.M.I.E., G.C.V.O., I.S.O.

VICEROY & GOVERNOR-GENERAL OF INDIA.

February 4, 1916.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ॐ

काशी विश्वविद्यालयः ।

माघे शुक्ले प्रतिपदि तिथौ शुक्रवारे शिलाया
न्यासं काश्यां ह्यगनवमहीसम्मिते विक्रमाब्दे ।
प्राच्चं धर्मं परिफलयितुं विश्वविद्यालयस्या-
कार्षीत् सम्राट् प्रतिनिधिवरो लार्ड हार्डिङ् सुकीर्तिः ।।

BENARES HINDU UNIVERSITY

THIS FOUNDATION-STONE WAS LAID
By H.E. The Right Honourable
CHARLES BARON HARDINGE OF PENSHURST
P.C., G.C.B., G.M.S. I., G.C.M.G., G.M.I.E., G.C.V.C., I.S.O.
VICEROY & GOVERNOR-GENERAL OF INDIA
February 4, 1916

शिलान्यास स्थल के ऊपर लगे संगमरमर के नीचे रिक्त स्थान में एक ताँबे का डिब्बा है जिसमें भारत सरकार तथा बहुत सी देशी रियासतों के प्रचलित सिक्के, हिन्दू युनिवर्सिटी सोसाइटी की रिपोर्ट, उस दिन के लीडर तथा पाइओनियर समाचार पत्रोंकी एक एक प्रतियाँ तथा एक ताम्रपत्र रखे गये हैं । ताम्रपत्र पर यह अङ्कित है :—

ॐ

काशीविश्वविद्यालयस्य
ताम्रपत्रलेखः

धर्मं सनातनं वीक्ष्य कालवेगेन पीडितम् ।
भूतले दुर्व्यवस्थं च व्याकुलं मानवं कुलम् ।।
कलेः पञ्चसहस्राब्दे गते भारतभूमिषु ।
आरोपयितुमुद्धारबीजमस्य पुनर्नवम् ।।
काशीक्षेत्रे पवित्रेऽत्र गङ्गातीरे महोदया ।
शुभेच्छा पुण्यसम्पन्ना सञ्जाता जगदात्मनः ।।
सङ्गमय्याथ पाश्चात्याः प्राच्याश्चापि प्रजा निजाः ।
तच्छ्रेष्ठानां विधायैकमत्यं सुमतिलक्षणम् ।।
विश्वनाथपुरे विश्वजनीनो विश्वभावनः ।
विश्वात्माऽऽकारयद्विश्वविद्यापीठव्यवस्थितिम् ।।

अर्थ

सनातन-धर्म को काल के वेग से पीड़ित तथा सम्पूर्ण भूमण्डल के प्राणियों को दुखस्थ और व्याकुल देखकर कलियुग के पाँच हजार वर्ष बीतने पर भारतभूमि में काशी-क्षेत्र में जाह्नवी के पवित्र तट पर इस सनातनधर्म के बीज का पुनः नवीन रूप से आरोपण करने के लिए जगदीश्वर की शुभ पुण्य इच्छा उत्पन्न हुई । अपनी प्राच्य और पाश्चात्य प्रजा को एक सूत्र-बद्ध करके और विशिष्ट विद्वानों का ऐक्यमत कर विश्वभावन, विश्वस्वरूप, विश्व-स्रष्टा ने विश्वनाथ की नगरी में विश्वविद्यालय के संस्थापन की व्यवस्था की ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निमित्तमात्रमत्राभूत् समीहायाः परेशितुः ।
मालवीयो देशभक्तो विप्रो मदनमोहनः ॥
निधाय वाङ्मयं तेजस्तस्मिन्नुद्बोध्य भारतम् ।
प्रह्वीकृत्यापि तच्छास्तृनस्मिन्नर्थे व्यधात्प्रभुः ॥
अन्येचापि निमित्तानि प्राभवन्नन्तरात्मनः ।
बीकानेरनृपो वीरो गङ्गासिंहो महामनाः ॥
श्रीरामेश्वरसिंहश्च दरभङ्गा-महीपतिः ।
प्रधानः कार्यकारिण्याः सभाया मानवर्धनः ॥
सुधीः सुन्दरलालश्च मन्त्री कोषाभिरक्षकः ।
गुरुदासादित्यरामौ वासंती वाग्मिनी तथा ॥
तथा रासबिहारी च वृद्धा ये देशवत्सलाः ।
दासगश्चान्ये भगवतो यथाशक्यं सिषेविरे ॥
विक्टोरियामहाराज्ञाः पौत्र एड्वर्डदेहजे ।
सम्राजि पंचमे ज्यार्जे भारतं परिशासति ॥
मेवारकाशिकाश्मीरमयसूराल्वराधिपान् ।
कोटा जयपुरेन्दौर जोधपूरादि भूमिपान् ॥
तथा कपूर्थलानाभाग्वालेरादि नरेश्वरान् ।
ईरयित्वा सहायार्थं सज्जनानपरांस्तथा ॥
गर्भस्य सर्वधर्माणां रक्षायै प्रचयाय च ।
प्रसाराय स्वलीलानां स एवैकः परः प्रभुः ॥

देशभक्त विप्र मदनमोहन मालवीय परमेश्वर की इस इच्छा को पूर्ण करने के निमित्त मात्र बने। भारत को जगाकर और उसमें वाङ्मय तेज का विधान कर भारत के शासकों को नम्र बनाकर इस कार्य को सफल करने में उन्हें प्रवृत्त किया। भगवान् की इस इच्छा पूर्ति में अन्य और भी कई महापुरुष निमित्त बने। बीकानेरनरेश वीर महामना महाराज श्री गङ्गा सिंह बहादुर, कार्यकारिणी सभा के सम्मान-वर्धक सभापति दरभङ्गा नरेश श्री रामेश्वर सिंह जी, मन्त्री एवं कोषाध्यक्ष डाक्टर श्री सुन्दर लाल जी, सर गुरुदास बैनर्जी, श्री आदित्यराम भट्टाचार्य जी, विदुषी श्रीमती एनी बेसण्ट, डाक्टर राजबिहारी घोष तथा अन्य विद्यावयोवृद्ध देशप्रेमी भगवत्-दासों ने यथाशक्ति इसकी सेवा की। महारानी विक्टोरिया के पौत्र, महाराज एडवर्ड के पुत्र सम्राट् पञ्चम-जार्ज के शासन काल में मेवाड़, काशी, काश्मीर, मैसूर, अलवर, कोटा, जयपुर, इन्दौर, जोधपुर, कपूर्थला, नाभा, ग्वालियर आदि राज्यों के नृपतियों को तथा अन्य धनी-मानी सज्जनों को इसकी सहायता के लिए प्रेरणा कर सब धर्मों के जन्मदाता सनातन-धर्म की रक्षा एवं उन्नति के लिए तथा अपनी लीला के विस्तार के निमित्त उन्हीं परात्पर प्रभु ने

लार्ड हार्डिङ्ग सुविख्यातं सम्राट् प्रतिनिधिं वरम् ।
धीरं वीरं प्रजाबन्धुं जनानां हृदयंगमम् ॥
विश्वविद्यालयस्यास्य शिलान्यासे न्ययोजयत् ॥
संप्राप्ते नेत्रभूभृद् ग्रहधरणिमिते वैक्रमेऽब्दे च मासे ।
माघे पक्षे च शुक्ले प्रतिपदि च तिथौ वह्निशुक्रे क्षणेऽच्छे ॥
श्रीकाश्यां श्रीलसम्राट् प्रतिनिधिकरतो यच्छिलान्यास आसीद् ।
यावच्चन्द्रार्कतारं विलसतु स महाविश्वविद्यालयोऽयम् ॥

सम्राट् के प्रतिनिधि (वायसराय) धीर-वीर प्रजाबन्धु श्री लॉर्ड हार्डिङ्ग द्वारा इस विश्वविद्यालय का शिलान्यास कराया। श्री विक्रम सम्वत् १९७३ में माघ शुक्ल प्रतिपदा शुक्रवार के दिन शुभमुहूर्त में श्रीकाशीनगरी में सम्राट् के प्रतिनिधि (वायसराय) के द्वारा जिस विश्वविद्यालय का शिलान्यास किया गया वह सूर्य चन्द्र स्थिति तक सुशोभित रहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सरस्वती श्रुतिमहती महीयताम् ।
ततः स्नुता ज्ञानसुधा निपीयताम् ।।
सदा मतिः शुभचरिते विधीयताम् ।
रतिः परा परमगुरौ प्रचीयताम् ।।

श्रुती (वेद) में मूर्तिमान माता सरस्वती अपने मानव शिशुओं की भक्ति-पूजा द्वारा सदा पुष्पित और प्रकाशित होती रहे । उस वाग्देवी से निरंतर प्रवाह हो रहे ज्ञान-विज्ञान रूपी अमृत का पान करते हुए वे मानव शिशु श्रमशील होकर उस ज्ञान विज्ञान के मर्मों को आत्मसात् करते रहें ।

सभी लोग सदा केवल सत्कार्यों में ही लगे रहें और सभी लोगों का हृदय-परमात्मा की प्रेमाभक्ति से सम्पूरित रहे ।

यहाँ एक बात पर ध्यान देना आवश्यक है । उपर्युक्त ताम्रलेख में कहीं भी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय नहीं लिखा गया है । केवल काशी विश्वविद्यालय लिखा ग़या है । विश्वविद्यालय के सरस्वती प्रतीक (emblem) में भी देवनागरी अक्षर में काशी विश्वविद्यालय ही लिखा है, केवल अंग्रेजी में Banaras Hindu University लिखा है । काशी शब्द की व्युत्पत्ति है—'काश्यते इति काशी' अर्थात् 'प्रकाशमान है, अतः काशी' कहते हैं । काशी पञ्चकम् में आदिशङ्कराचार्य कहते हैं :—

काश्यां हि काश्यते काशी काशी सर्वप्रकाशिका ।
सा काशी विदिता येन तेन प्राप्ता हि काशिका ।।

काशी क्षेत्र में ब्रह्म (काशी) प्रकाशमान है । वह (काशी) ब्रह्म सबको प्रकाशित करता है । उस (काशी) ब्रह्म का ज्ञान जिसे हो जाता है, वह ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है । अर्थात् उसे मुक्ति मिल जाती है ।

बहुत सोच समझ कर 'काशी विश्वविद्यालय' का प्रयोग ताम्रलेख और विश्वविद्यालय के प्रतीक में किया गया है । विश्वविद्यालय के प्रतीक में कुछ वर्षों से 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' लिखा जा रहा है । यह विश्वविद्यालय के स्थापकों की भावनाओं के अनुरूप नहीं है ।

शिलान्यास के बाद चार दिनों तक अर्थात् वसन्तपञ्चमी तक शिलान्यास स्थल पर पूजा-पाठ का कार्यक्रम यथावत् चलता रहा । वसन्त पञ्चमी को ही पूर्णाहुति हुई । इस बीच, चारों दिनों में (५ फरवरी से ८ फरवरी तक) कमच्छा स्थित सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के काशी नरेश हाल में विद्वानों का व्याख्यान चलता रहा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वसन्त पञ्चमी को पूर्णाहुति होने के कारण विश्वविद्यालय में शिलान्यास दिवस प्रतिवर्ष वसन्त पञ्चमी को ही मनाया जाता है। पूज्य मालवीयजी के समय में सभी अध्यापक और विद्यार्थी उस दिन वसन्ती रंग के वस्त्र पहनकर जलूस में शिलान्यास-स्थान जाते थे। जलूस लम्बा होता था। उसमें हर एक कालेज की झाँकी भी होती थी। शिलान्यास स्थान पर प्रात:काल से ही हवन, पूजा आदि का कार्यक्रम प्रारम्भ हो जाता था। जलूस के वहाँ पहुँचने के पश्चात् पूर्णाहुति होती थी, भाषण आदि होते थे, प्रसाद वितरण भी होता था।

✿ ✿ ✿ ✿

बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी एक्ट (एक्ट आफ १९१५), १ अक्टूबर १९१५ को पास हो गया था प्ररन्तु लागू नहीं हुआ था। सेवा-निवृत्त होने के पूर्व ही २३ मार्च १९१६ को लार्ड हार्डिङ् ने आदेश दे दिया कि यह एक्ट १ अप्रैल १९१६ से लागू होगा। इस एक्ट के अनुसार—

१. भारत के गवर्नर जनरल विश्वविद्यालय के लार्ड रेक्टर बने।

२. संयुक्त प्रान्त के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर विश्वविद्यालय के विज़िटर बने।

३.(१) विश्वविद्यालय के संविधि (Statute) के अन्तर्गत—

(i) ब्रिटिश भारत के १४ प्रान्तों के शासक (गवर्नर या लेफ्टिनेन्ट गवर्नर या चीफ कमिश्नर) विश्वविद्यालय के संरक्षक (Patron) बने।

(ii) भारत के चौदह देशी राज्यों के महाराजा/राजा भी विश्वविद्यालय के संरक्षक (Patron) बने।

(२) महाराज दरभङ्गा विश्वविद्यालय के उपसंरक्षक नियुक्त हुए।

१ अप्रैल १९१६ को एक अधिसूचना द्वारा घोषित किया गया कि—

१. मैसूर के महाराजा कृष्णराज वाडियार विश्वविद्यालय के प्रथम चान्सलर होंगे।

२. ग्वालियर के महाराजा माधवराव सिंधिया विश्वविद्यालय के प्रथम प्रो.चान्सलर होंगे।

३. डा० सुन्दरलाल विश्वविद्यालय के प्रथम वाइस-चान्सलर होंगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्वविद्यालय के कोर्ट—सर्वोच्च शासी निकाय (Supreme Governing Body)[1] का भी संघटन हो गया और उसकी पहली बैठक १२ अगस्त १९१६ को दिन में १२ बजे अभिजित मुहूर्त में प्रारम्भ हुई। कोर्ट के लिए सदस्यों का निर्वाचन एवं कार्यकारिणी समिति (Council) का निर्वाचन दोनों सम्पन्न हुए। उसके साथ ही विश्वविद्यालय के शासकीय कार्य आरम्भ हो गये।

शिक्षण कार्य के लिए कुछ औपचारिक आवश्यकताओं को पूरा करना था। सभी आवश्यकताएँ कालक्रम से पूरी हो गयीं। तदनन्तर भारत के गवर्नर जनरल एवं वाइसराय ने एक अधिसूचना द्वारा घोषित कर दिया कि पहली अक्टूबर १९१७ से सेन्ट्रल हिन्दू कालेज विश्वविद्यालय का कालेज माना जायगा। उस समय सेन्ट्रल हिन्दू कालेज का शिक्षण कार्य कमच्छा में स्थित भवनों में ही चल रहा था।

विश्वविद्यालय के लिए नगवा में भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही चल रही थी। १२१५.५३ एकड़ भूमि मिलनी थी। उसके लिए विश्वविद्यालय ने छः लाख रुपये राजकोष में जमा भी कर दी थी। सारी कार्यवाही पूरी

---

१. विश्वविद्यालय की संविधि (Statute) के अनुसार विश्वविद्यालय के कोर्ट (Supreme Governing Body) की संरचना निम्नलिखित प्रकार थी:—

Class I प्रथम वर्ग के सदस्य—पदेन सदस्य : कुलाधिपति (Chancellor), उपकुलाधिपति (Pro. Chancellor), कुलपति (Vice Chancellor), उपकुलपति (Pro. Vice Chancellor),

Class II द्वितीय वर्ग के सदस्य—विश्वविद्यालय के दाता तथा उनके प्रतिनिधि।

Class III निर्वाचित सदस्य—

१.	विश्वविद्यालय के पंजीकृत स्नातकों द्वारा निर्वाचित सदस्य	१०
२.	विश्वविद्यालय के पंजीकृत दाताओं (जिन्होंने रु० ५०० या उससे अधिक दान दिये हों) द्वारा निर्वाचित सदस्य	३०
३.	विश्वविद्यालय के सेनेट द्वारा निर्वाचित सदस्य	१०
४.	धर्म एवं संस्कृत विद्या के प्रतिनिधि—विश्वविद्यालय कोर्ट द्वारा निर्वाचित सदस्य	१५
५.	जैन और सिख समुदाय के प्रतिनधि—विश्वविद्यालय कोर्ट द्वारा निर्वाचित सदस्य	१०
६.	विद्यावृत्ति के प्रतिनिधि—विश्वविद्यालय कोर्ट द्वारा निर्वाचित सदस्य	१०
७.	विश्वविद्यालय कोर्ट द्वारा निर्वाचित अन्य अधिकतम सदस्य	२०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होने के बाद २७ जनवरी १९१७ को पूरी भूमि विश्वविद्यालय के कब्जे में आ गयी। संयुक्त प्रान्त सरकार के परामर्शी वास्तुकार फ्रैंक लिशमैन से विश्वविद्यालय का ले-आउट प्लैन बनाने के लिए कहा गया।

विश्वविद्यालय के भवन निर्माण कार्य के लिए संयुक्त प्रान्त सरकार में कार्यरत एक कर्मठ इञ्जिनियर ज्वाला प्रसाद जी की सेवायें विश्वविद्यालय को उपलब्ध हो गयी थीं। १७ दिसम्बर १९१६ को उन्होंने विश्वविद्यालय में Superintendent of Works का पद भार ग्रहण कर लिया था। १२ अगस्त १९१६ को विश्वविद्यालय के कोर्ट और कार्यकारिणी समिति के निर्वाचित सदस्य लाहौर के प्रसिद्ध इञ्जिनियर गंगारामजी Honorary Chief Engineer के रूप में विश्वविद्यालय की सेवा करने के लिए कमर कसकर खड़े हो गये।

मालवीयजी की परिकल्पना के अनुसार ले-आउट प्लैन बना और जुलाई १९१८ में नगवा परिसर में भवन निर्माण का कार्य आरम्भ हो गया। गंगारामजी और ज्वाला प्रसाद जी के अथक प्रयत्न से तीन वर्ष के भीतर ही सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के लिए तीन भवन, आर्टस् कालेज, फिसिक्स् लेबरेटरी और केमिकल लेबरेटरी तैयार हो गये। (इञ्जिनियरिंग कालेज के लिए भवन, वर्कशाप, पावर हाउस आदि उसके पूर्व ही बन गये थे और वहाँ शिक्षण कार्य भी प्रारम्भ हो गया था।) तीन बड़े छात्रावास और शिक्षकों तथा कर्मचारियों के लिए आवास भी तैयार हो गये।

जुलाई १९२१ में सेन्ट्रल हिन्दू कालेज का नूतन गृह प्रवेश हो गया। कमच्छा भवनों में सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल, रणवीर संस्कृत पाठशाला और टीचर्स ट्रेनिंग कालेज चलने लगे।

प्राच्य विद्या कालेज और धर्मविज्ञान कालेज और विश्वविद्यालय कार्यालय आर्टस् कालेज के भवन में स्थापित हुए। धीरे-धीरे अन्य विद्यालयों को भी खोला गया। ला कालेज की स्थापना १९२३ में हुई। आयुर्वेद कालेज की स्थापना १९२८ में हुई। उसके पूर्व ही सर सुन्दरलाल अस्पताल में चिकित्सा कार्य प्रारम्भ हो गया था। महिला महाविद्यालय और छात्रावास १९२८-२९ में अस्तित्व में आये। कृषि अनुसंधान प्रतिष्ठान १९२९ से कार्य करने लगा। उसी वर्ष सयाजीराव गायकवाड़ पुस्तकालय का निर्माण भी प्रारम्भ हुआ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जनता का विश्वविद्यालय होने के कारण, जनता की आकांक्षा और देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पूज्य मालवीयजी कार्य कर रहे थे[१]। इस बीच उन्हें देश के अन्य कार्यों को भी देखना पड़ता था। कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन दिल्ली में दिसम्बर १९१८ में होने वाला था। मालवीयजी इस अधिवेशन के लिए अध्यक्ष चुने गये थे। अगले वर्ष

१. अपने देश में औद्योगिक और तकनीकी विकास को उन्नत करने के लिए मालवीयजी सदा चिन्तित रहते थे। अत: प्रारम्भ से ही वे तकनीकी शिक्षा को बढ़ाने की दिशा में प्रयत्नशील थे। विश्वविद्यालय का प्रथम विवरण पत्र जो उन्होंने सन् १९०५ में वितरित किया था, उसमें विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा को समुचित स्थान दिया गया था। सन् १९११ में प्रकाशित उनके संशोधित एवं परिष्कृत योजना में भी उन्होंने विस्तार से विज्ञान और तकनीकी विद्यालय के बारे में बतलाया था। विश्वविद्यालय के मुख्य उद्देश्यों में निर्धारित थे :—

१. कला तथा विज्ञान में शिक्षा और अन्वेषण के कार्य की सर्वतोमुखी उन्नति।
२. भारतीय घरेलू धन्धों और भारत के वैभव के पुनरुद्धार होने के उपयुक्त आवश्यक व्यावहारिक ज्ञान से युक्त वैज्ञानिक तथा व्यावसायिक शिल्प-कलादि ज्ञानों की शिक्षा देना।

मई १९१६ में भारत सरकार ने सर टी०एच० हालैंड की अध्यक्षता में इण्डियन इंडस्ट्रियल कमीशन नामक एक आयोग नियुक्त किया। उस आयोग में अध्यक्ष के अलावा पाँच और सदस्य अंगरेज थे। तीन सदस्य प्रसिद्ध भारतीय औद्योगिक थे। मालवीयजी भी इस आयोग के एक सदस्य नियुक्त हुए। वे उस समय केन्द्रीय विधान कौंसिल (Imperial Legislative Council) के सदस्य थे। उक्त दस सदस्यीय आयोग ने सन् १९१८ में अपनी रिपोर्ट तैयार की।

कहा जाता है कि मालवीयजी के आग्रह के कारण रिपोर्ट की पाण्डुलिपि कई बार बदलनी पड़ी। उसके बाद भी मालयवीयजी ने रिपोर्ट के साथ अपना एक अलग नोट लिखा जिसमें उन्होंने कमीशन की संस्तुतियों की पुष्टि करते हुए, सरकार की औद्योगिक और वित्तनीति की विस्तार से समीक्षा करते हुए बहुत से महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये। यह नोट भारत के व्यावसायिक आर्थिक इतिहास के अध्ययन के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

काशी विश्वविद्यालय की स्थापना होते ही उन्होंने सन् १९१९ में इंजिनियरिंग कालेज खोला। सेन्ट्रल हिन्दू कालेज में विज्ञान की पढ़ाई को उन्नत किया। सन् १९२३ में Mining and Metallurgy, सन् १९२४ में Industrial Chemistry, सन् १९३२ में Pharmaceutical Chemistry और सन् १९३६ में Ceramics, Glass Technology विभाग खोले गये। इन विभागों से जनता को बहुत लाभ हुआ। इन विषयों की पढ़ाई के लिए विद्यार्थियों को विदेश जाने की आवश्यकता नहीं हुई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थात् सन् १९१९ के अन्त तक उन्हें कांग्रेस के अध्यक्ष का भार संभालना था। अगले वर्ष अर्थात् १३ अप्रैल १९१९ को जलियाँवाला बाग काण्ड हुआ जिसके कारण भारत की राजनीतिक स्थिति बिलकुल बदल गयी। पूरे वर्ष मालवीयजी उसमें व्यस्त थे। गोलीकाण्ड की जाँच तथा मृतकों एवं कैदियों के परिवारों की सहायता में उन्होंने अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किये। उसके बाद असहयोग आन्दोलन आरंभ हो गया, साथ में सरकार की दमन-नीति भी।

इसके अतिरिक्त एक और समस्या देश के सम्मुख आ गयी। सन् १९२९ में व्यापार में घोर मंदी छा जाने के कारण यूरोप और अमेरिका की आर्थिक स्थिति डगमगा गयी। ब्रिटेन सबसे अधिक आहत हुआ; उसे पौण्ड का अवमूल्यन करना पड़ा; स्वर्णमान का परित्याग करना पड़ा; करों को बढ़ाना पड़ा और ऋण भी लेना पड़ा। ब्रिटिश साम्राज्य का अंग होने के कारण भारत पर उसका भार पड़ना सहज ही था। भारत सरकार को अपने खर्च में कटौती करनी पड़ी।

आमदनी में कमी हो जाने के कारण भारतवर्ष के उद्योगपति एवं व्यापारी, धर्मार्थ और लोककल्याण कार्यों के लिए पहले की तरह उदार होकर खर्च करने में असमर्थ हो गये।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को भी खर्च में कटौती करनी पड़ी। यहाँ तक कि अध्यापकों के वेतन में भी कमी की गयी। इन सब कठिनाइयों के होते हुए विश्वविद्यालय को उन्नति के मार्ग पर लगातार आगे बढ़ाते ले जाना कोई साधारण कार्य नहीं था। पूज्य मालवीयजी ही इस कार्य को करने में सक्षम थे और वे इसे सफलतापूर्वक करते रहे। इतना अवश्य था कि विश्वविद्यालय के सभी अध्यापक, अधिकारी, कर्मचारी और सेवक समर्पित भाव से, त्याग बुद्धि से, अपने कर्तव्यों का पालन करते थे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३

विश्वविद्यालय के मुख्य ध्येयों में महत्त्वपूर्ण था—धर्म और नीति को शिक्षा का आवश्यक अंग मानकर, अखण्ड भाग बनाकर, युवकों में सदाचार का संघटन और चरित्र-निर्माण को उन्नत करना ।

पूज्य मालवीयजी इसी ध्येय की पूर्ति के लिए सदा प्रयत्नशील रहते थे । वे चाहते थे कि इस गुरुकुल (आवासी) विश्वविद्यालय से निकलने वाला प्रत्येक विद्यार्थी शरीर से हृष्ट-पुष्ट, बलवान्, विद्वान्, चरित्रवान्, बुद्धिमान्, देशभक्त और ईश्वरभक्त हो । विद्यार्थियों से वे कहते थे :—

दूध पियो कसरत करो, नित्य लेव हरि नाम ।
मन लगाय विद्या पढ़ो पूरेंगे सब काम ।।

सत्येन ब्रह्मचर्येण व्यायामेनाथ विद्यया ।
देशभक्त्याऽत्मत्यागेन सम्मानार्हः सदा भव ।।

सत्य से, ब्रह्मचर्य से, व्यायाम से, विद्या से, देशभक्ति से और आत्मत्याग से सदा आदर के योग्य बनो ।

ज्योतिरात्मनि नान्यत्र समं तत्सर्वजन्तुषु ।
स्वयं च शक्यते दृष्टुं सुसमाहित चेतसा ।।

ब्रह्म की ज्योति अपने भीतर ही है, वह सब जीवधारियों में समान है । मनुष्य मन को अच्छी तरह शान्त और सुसमाहित कर उसे देख सकता है ।

स्मर्तव्यः सततं विष्णुर्विस्मर्तव्यो न जातु चित् ।।
सर्वे विधि-निषेधाः स्युरेतयोरेव किंकराः ।।

ईश्वर को सदैव स्मरण रखना चाहिए । उसे कभी न भुलावो । सभी धार्मिक आदेशों तथा निषेधों का इन्हीं दो वाक्यों से पालन हो जाता है ।

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।

दूसरों के प्रति कोई भी ऐसा आचरण न करो जिसे तुम अपने प्रति किये जाने पर अप्रिय समझते हो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यद्यदात्मनि चेच्छेत तत्परस्यापि चिन्तयेत् ।

जो कुछ तुम अपने प्रति चाहते हो, वैसा ही तुम्हें दूसरों के प्रति भी करना आवश्यक है, 'ऐसा सोचो' ।

आर्टस् कालेज के हाल में प्रतिदिन पहला घंटा धर्मशिक्षा का होता रहा । सनातन धर्म के मूल सिद्धान्तों को धर्माध्यापक विद्यार्थियों को समझाते रहे। रविवार को गीता प्रवचन, और प्रत्येक एकादशी के दिन कथा होती रही। महाभारत, श्रीमद्भागवत और पुराणों से चुनकर ऐसी कथाओं को कहा जाता रहा जिससे विद्यार्थियों का नैतिक और आध्यात्मिक बल बढ़े और उनके चरित्र का समुचित विकास हो । जब-जब अवकाश मिले, पूज्य मालवीयजी स्वयं कथा कहते रहे ।

विश्वविद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक सभी कार्य विधिवत् होते रहे परन्तु पूज्य मालवीयजी का एक सङ्कल्प उनके मस्तिष्क के काल्पनिक क्षेत्र में ही विचरण करता रहा । वे बराबर कहते रहे—

हिताय सर्वलोकानां निग्रहाय च दुष्कृतां
धर्मसंस्थापनार्थाय प्रणम्य परमेश्वरम् ।
प्रसादाद्विश्वनाथस्य काश्यां भागीरथीतटे
विश्वविद्यालयः श्रेष्ठः हिन्दूनां मानवर्धनः ।।
हिन्दूराज्याधिपतिर्धनिकैर्धार्मिकैस्तथा
मिलित्वा स्थापितः सद्भिर्विद्याधर्मविवृद्धये ।।

विश्वनाथ के प्रसाद से बनने वाले विश्वविद्यालय में विश्वनाथ का मन्दिर बनाने का विचार तो मालवीयजी के मन में उसी दिन आ गया था जिस दिन उनके पिता पण्डित व्रजनाथजी व्यास ने १०१ रुपये काशी विश्वनाथजी को चढ़ाकर उन्हें प्रसाद के रूप में दिया था । सन् १९१६ में विश्वविद्यालय के शिलान्यास के बाद इस विषय पर चिन्तन एवं मनन करना उनके लिए आवश्यक हो गया । विश्वविद्यालय के विस्तृत क्षेत्र में विश्वनाथ मन्दिर किस स्थान पर बनाया जाय, इस विषय पर ले-आउट प्लैन बनाने के पूर्व निर्णय लेना था ।

इस संदर्भ में गांधीजी के कुछ कथन उल्लेखनीय हैं । गांधीजी सन् १९०२ में प्रथम बार काशी आये थे । वे उस समय प्रसिद्ध नहीं हुए थे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपनी आत्मकथा में वे लिखते हैं :—

"काशी स्टेशन पर मैं सबेरे उतरा। मुझे किसी पण्डे के ही यहाँ उतरना था। कई ब्राह्मणों ने मुझे घेर लिया। उनमें से जो मुझे थोड़ा सुघड़ और सज्जन लगा, उसका घर मैंने पसन्द किया। मेरा चुनाव अच्छा सिद्ध हुआ। ब्राह्मण के आँगन में गाय बँधी थी। ऊपर एक कमरा था। उसमें मुझे ठहराया गया। मैं विधिपूर्वक गंगा-स्नान करना चाहता था। तब तक मुझे उपवास रखना था। पण्डे ने सब तैयारी की। मैंने उससे कह रखा था कि मैं सवा रुपये से अधिक दक्षिणा नहीं दे सकूँगा, अतएव उसी के लायक तैयारी वह करे। पण्डे ने बिना झगड़े के मेरी विनती स्वीकार कर ली। वह बोला : 'हम लोग अमीर-गरीब सब लोगों को पूजा तो एकसी ही कराते हैं। दक्षिणा यजमान की इच्छा और शक्ति पर निर्भर करती है।' मेरे ख्याल से पण्डाजी ने पूजा-विधि में कोई गड़बड़ी नहीं की। लगभग बारह बजे इससे फुरसत पाकर मैं काशी विश्वनाथजी के दर्शन करने गया। वहाँ जो कुछ देखा उससे मुझे दुःख ही हुआ।

सन् १८९१ में जब मैं बम्बई में वकालत करता था, तब एक बार प्रार्थना-समाज के मन्दिर में 'काशी यात्रा' विषय पर व्याख्यान सुना था। अतएव थोड़ी निराशा के लिए तो मैं पहले से तैयार ही था। पर वास्तव में जो निराशा हुई, वह अपेक्षा से अधिक थी।

संकरी, फिसलनवाली गली में से होकर जाना था। शान्ति का नाम भी नहीं था। मक्खियों की भिनभिनाहट तथा यात्रियों और दुकानदारों का कोलाहल मुझे असह्य प्रतीत हुआ।

जहां मनुष्य ध्यान और भगवत्-चिन्तन की आशा रखता है, वहाँ उसे इनमें से कुछ भी नहीं मिलता। यदि ध्यान की जरूरत हो, तो वह अपने अन्तर में से पाना होगा। अवश्य ही मैंने ऐसी श्रद्धालु बहनों को भी देखा, जिन्हें इस बात का बिल्कुल पता न था कि उनके आसपास क्या हो रहा है। वे केवल अपने ध्यान में ही निमग्न थीं। पर इसे प्रबन्धकों का पुरुषार्थ नहीं माना जा सकता। काशी-विश्वनाथ के आसपास शान्त, निर्मल सुगन्धित और स्वच्छ वातावरण—बाह्य एवं आन्तरिक—उत्पन्न करना और उसे बनाये रखना प्रबन्धकों का कर्तव्य होना चाहिए। इसके बदले वहाँ मैंने ठग दुकानदारों का बाजार देखा, जिसमें नये-से-नये ढंग की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मिठाइयाँ और खिलौने बिकते थे।

मंन्दिर में पहुँचने पर दरवाजे के सामने बदबूदार सड़े हुए फूल मिले। अन्दर बढ़िया संगमरमर का फर्श था। पर किसी अन्धश्रद्धालु ने उसे रुपयों से जड़वाकर खराब कर डाला था और रुपयों में मैल भर गया था।

मैं ज्ञानवापी के समीप गया। वहाँ मैंने ईश्वर को खोजा, पर वह न मिला। इससे मैं मन ही मन क्षुब्ध हो रहा था। ज्ञानवापी के आसपास भी गंदगी देखी।...."[१]

इस काशी यात्रा के दो वर्ष के बाद गांधीजी दक्षिण अफ्रीका चले गये। 'दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास' रचकर वे सन् १९१५ में भारत लौटे। तब वे जगत्प्रसिद्ध हो चुके थे। मालवीयजी ने उन्हें काशी विश्वविद्यालय के शिलान्यास महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए विशेष रूप से आमन्त्रित किया था। ४ फरवरी १९१६ को शिलान्यास महोत्सव के पण्डाल में उनके दर्शन का सौभाग्य काशी के नागरिकों को प्राप्त हुआ। शिलान्यास के बाद कमच्छा स्थित सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के काशीनरेश हाल में आयोजित व्याख्यान-माला में ६ फरवरी १९१६ को गांधीजी का संवेदनात्मक भाषण हुआ। काशी विश्वनाथ मन्दिर में हुए अपने पुराने अनुभवों को सुनाते हुए उन्होंने पूछा कि यदि हम अपने पवित्र मन्दिर और उसके आसपास के वातावरण को भी शुद्ध और पवित्र नहीं रख सकते तो स्वराज्य की कामना कैसे कर सकते हैं ? उस दिन की सभा कोलाहल के कारण विसर्जित हो गयी, परन्तु मालवीयजी बैठे रहे और गांधीजी से दक्षिण अफ्रीका में उनके अनुभव के बारे में जानकारी प्राप्त करते रहे। काशी विश्वविद्यालय में स्थापित होने वाले विश्वनाथ मन्दिर के सम्बन्ध में भी उन्होंने गांधीजी को अपने योजना बतायी और कहा कि वह मन्दिर आपकी आशंसा के अनुरूप ही रहेगा।

जैसे कि पहले बताया जा चुका है, नगवा में विश्वविद्यालय के लिए

१. आत्मकथा-(१९५७ में नवजीवन ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित) तीसरा भाग, अध्याय-२०, पृष्ठ २१८-२१९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही पूरी होने के पश्चात् २७ जनवरी १९१७ को विश्वविद्यालय के आधिपत्य में १२१५.५३ एकड़ भूमि आ गयी । ले-आउट प्लैन बनाने का कार्य तुरन्त प्रारम्भ हो गया । मालवीयजी के विचारानुसार अर्धचन्द्राकार के रूप में मानचित्र बना । इसके केन्द्र में २१०००० वर्ग मीटर का एक विस्तृत क्षेत्र मन्दिर के लिए निर्धारित किया गया था ।

पूज्य मालवीयजी की योजना थी कि—

१. इस भूमि के मध्य में मन्दिर बने । मन्दिर के चारों ओर, प्रवेश द्वार को छोड़कर, एक वृत्ताकार पचास फीट चौड़ी नहर बनायी जाय और उसमें रामनगर के उत्तर किसी स्थान से नहर द्वारा या पम्प द्वारा गङ्गाजल लाया जाय । मन्दिर के चारों ओर बनने वाली नहर में गङ्गाजी का निरन्तर प्रवाह बना रहना चाहिए, अतः नहर में एक निकास की भी व्यवस्था होनी चाहिए। नहर से निकलने वाले जल को विश्वविद्यालय के खेतीफ़ार्म तक ले जाना चाहिए । नहर में तीन स्नान-घाट भी होने चाहिए ।

२. मन्दिर के निचले तल में केवल एक बड़ा हॉल बने जिसमें कोई खम्भा न हो । विद्यार्थियों की परीक्षा इसी हाल में हो ताकि वे शान्ति से भगवान् का स्मरण करते हुए प्रश्नपत्र का उत्तर दे सकें । इसी हाल में कथा, भजन, कीर्तन आदि की भी व्यवस्था हो सकती है ।

३. भगवान् विश्वनाथ का गर्भगृह पहले तल्ले में हो । पहले तल्ले में जाने के लिए मन्दिर के प्रवेश में ही सुविधाजनक सीढ़ियाँ हों ।

४. अन्य मूर्तियों की स्थापना पहले एवं दूसरे तल्ले में हो सकती है । मन्दिर में तीन मुख्य शिखर होंगे ।

इन सब मुख्य बातों को ध्यान में रखकर मन्दिर का मानचित्र, सामने का स्वरूप (Front elevation) आदि बनाये गये ।

पाठकों के अवलोकनार्थ अगले पृष्ठ में विश्वविद्यालय के ले-आउट-प्लैन का चित्र एवं विश्वनाथ मन्दिर का Front elevation का चित्र दिया जा रहा है ।

विश्वविद्यालय के ले-आउट प्लैन में एक और बात पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है । मन्दिर ठीक पूर्व दिशा की ओर देखते हुए है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

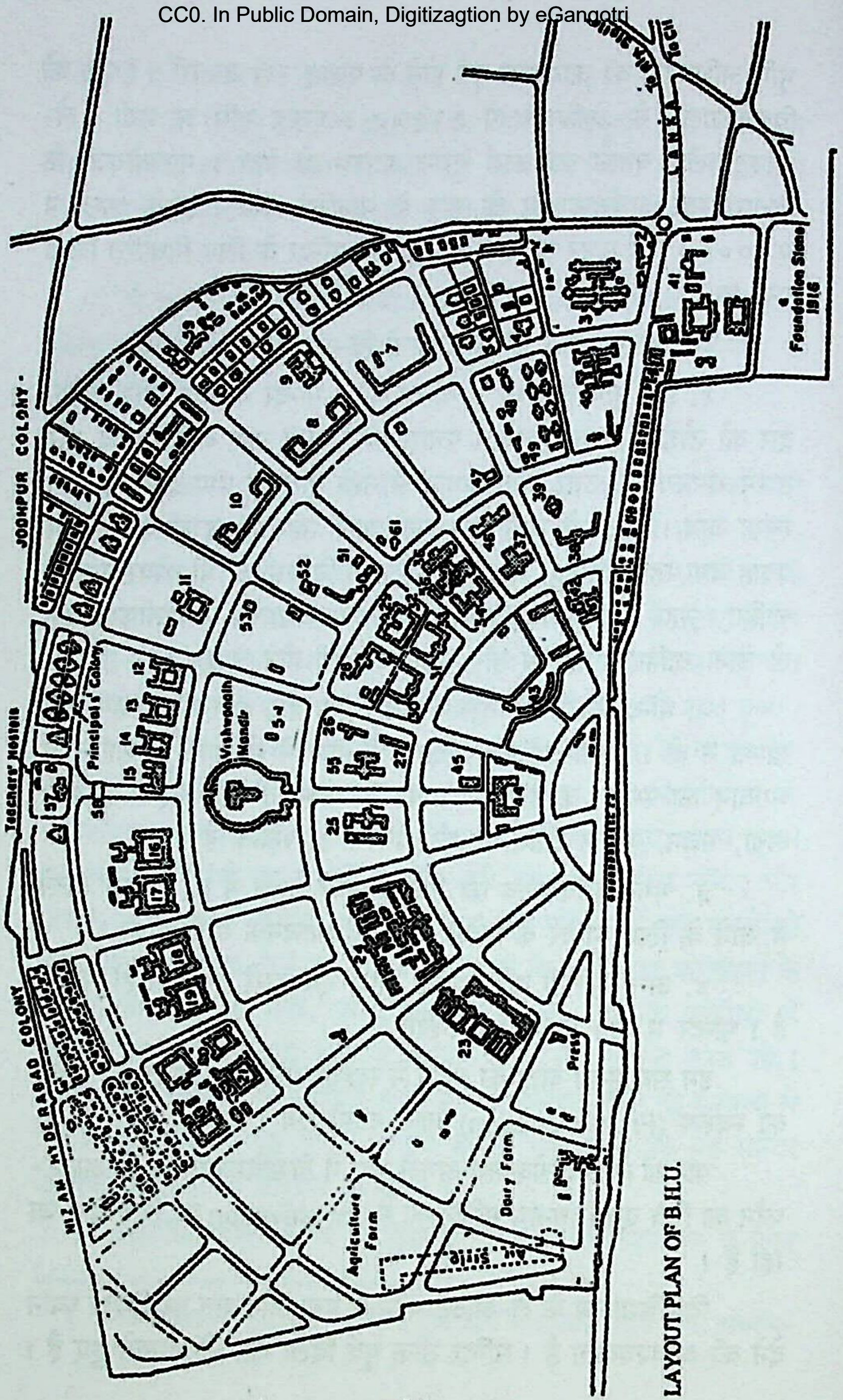

LAYOUT PLAN OF B.H.U.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

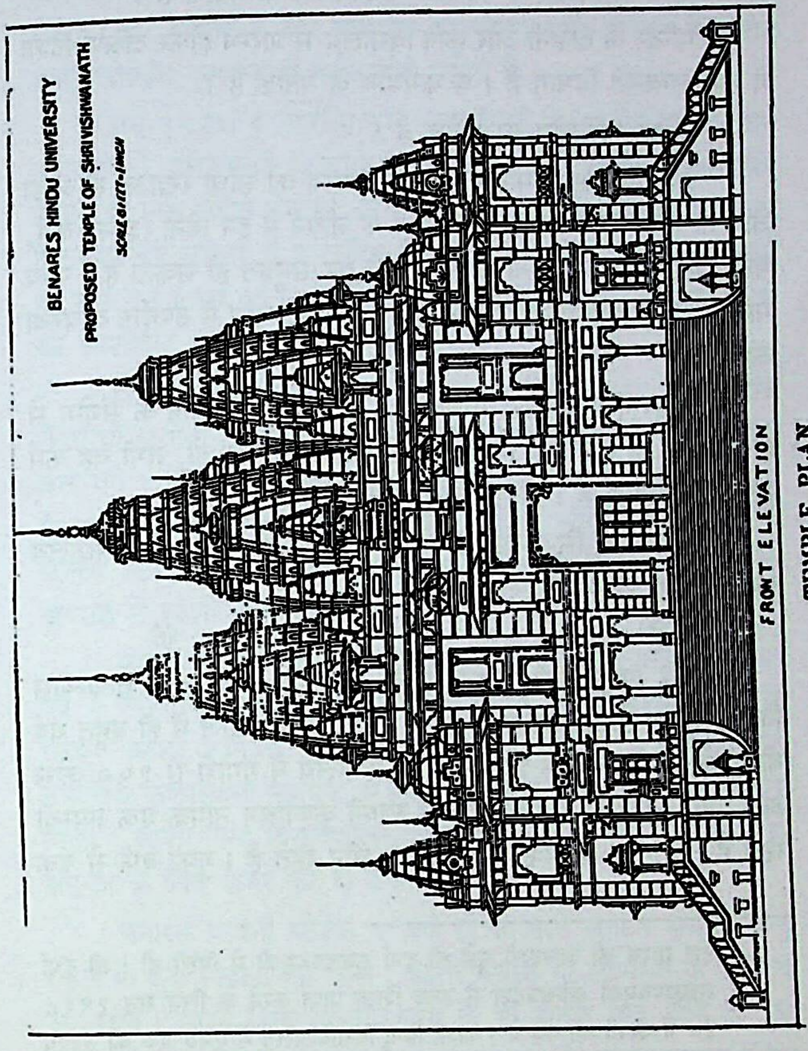

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसके बायीं ओर पुस्तकालय से आरम्भ होकर उत्तर दिशा में ज्ञान एवं विज्ञान सम्बन्धी शिक्षा विभाग हैं। ये ज्ञानयोग के प्रतीक हैं।

मन्दिर के दाहिनी ओर कृषि विद्यालय से प्रारम्भ होकर दक्षिण दिशा में कर्म सम्बन्धी विभाग हैं। ये कर्मयोग के प्रतीक हैं।

मन्दिर भक्तियोग का प्रतीक है।

कृषि विद्यालय, मन्दिर एवं पुस्तकालय को सीधी रेखाओं से जोड़ा जाय तो एक त्रिभुज बनता है। मनुष्य के जीवन में इन तीनों (ज्ञान, कर्म, भक्ति) का समाकलन होना चाहिए, तभी वह समुन्नत हो सकता है। पूज्य मालवीयजी ने इसी को दर्शाने के लिए ले-आउट प्लैन में उपर्युक्त व्यवस्था की थी[१]।

बिना भक्ति के ज्ञान निरर्थक है। आत्मज्ञान भी भक्ति के संयोग से ही परिपक्व हो सकता है। कर्म में भी भगवान् का योग हो, तभी वह कर्म सफल हो सकता है। योग: कर्मसु कौशलम्।

गुरुकुल के सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर ही उन्होंने विश्वविद्यालय का मानचित्र 'ले-आउट प्लैन' बनाया।

पूज्य मालवीयजी चाहते थे कि विश्वनाथ मन्दिर का शिलान्यास किसी महात्मा के करकमलों से ही हो। महात्मा की खोज में ही बहुत वर्ष बीत गये। अन्त में उन्हें ज्ञात हुआ कि हिमालय में गंगोत्री से १५० कोस और आगे काण्डकी में एक गुफा में स्वामी कृष्णाश्रम नामक एक तपस्वी रहते हैं। वे गुफा में रहकर सदा तप में लीन रहते हैं। गुफा बर्फ से ढक

---

१. इस रहस्य की जानकारी मुझे श्री दर्भा सुब्रह्मण्यम्जी से मिली थी। श्री दर्भा सुब्रह्मण्यम्जी आन्ध्रप्रदेश से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए सन् १९१८ ई० में काशी आ गये थे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एम० ए० की उपाधि प्राप्त करने के बाद उनकी नियुक्ति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में १ जुलाई १९२१ से हो गयी। वे एक साधुपुरुष थे। अत्यन्त निष्ठापूर्वक कार्य करते हुए वे दिसम्बर १९५५ में पुस्तकालयाध्यक्ष के पद से रिटायर हुए थे। पूज्य मालवीयजी का सान्निध्य उन्हें प्राप्त था।

(लेखक)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जाती है, द्वार बन्द हो जाता है किन्तु तपस्वी महाराज एक शिला पर दिगम्बर वेश में ही विराजमान रहते हैं; आसपास के पहाड़ी लोग बर्फ काटकर द्वार खोलते हैं और स्वामीजी को भोजन आदि दे जाते हैं। लोग उन्हें तपोनिधि कृष्णस्वामी के नाम से जानते हैं।

सन् १९२७ के लगभग पूज्य मालवीयजी ने भारतीय सनातन धर्म महासभा के प्रधानमन्त्री गोस्वामी गणेशदत्त के द्वारा तपोनिधि कृष्णाश्रम स्वामी के पास संदेश भेजकर उनसे निवेदन किया कि वे काशी पधारकर विश्वविद्यालय परिसर में प्रस्तावित विश्वनाथ मन्दिर का शिलान्यास करने की कृपा करें। चार वर्ष निरन्तर प्रयास करने के पश्चात् तपोनिधि स्वामीजी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ।

शिलान्यास के लिए मुहूर्त ७ मार्च को निश्चित हुआ। आवश्यक तैयारियाँ हो गयीं। पूज्य मालवीयजी तपोनिधिजी को लाने के लिए दिल्ली चले गये। स्वामीजी हिमालय के गंगोत्री से १५० कोस चलकर ६ दिन के बाद निकटतम रेलवे स्टेशन पहुँचे। वहाँ से लोग उन्हें रेलगाड़ी से दिल्ली लाये। विश्वविद्यालय में सूचना मिल गयी कि वे ७ मार्च को अपराह्न में काशी पहुँच रहे हैं।

काशी से प्रकाशित होने वाले सायंकालीन दैनिक 'आज' समाचार पत्र में लिखा था—**श्री तपोनिधि का आगमन, मन्दिर शिलान्यास के लिए** "काशी शनिवार (७-३-१९३१)—२ बज के २४ मिनट पर तपोनिधि कृष्णस्वामी महाराज के हवड़ा एक्सप्रेस से यहाँ आने की सूचना मिली। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय और सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल में पहले ही स्वागत के लिए खबर कर दी गयी थी।

बनारस छावनी स्टेशन १ बजे ही से भरने लगा। सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल के कुछ स्काउट आ पहुँचे। बहुतेरे बालक भी स्वामीजी के दर्शनार्थ आ पहुँचे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भी अनेक छात्र और दो एक अध्यापक आ गये। हिन्दू स्कूल के भी अध्यापक और प्रधानाध्यापक पंडित रामनारायण मिश्र उपस्थित थे।

सभी लोग उत्सुकता के साथ गाड़ी की राह देख रहे थे। स्कूल के अध्यापक और छात्रों के अतिरिक्त काशी के अनेक गण्यमान्य रईस आदि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भी उपस्थित थे। २ बज के २४ मिनट पर गाड़ी आयी। गाड़ी के समीप पहुँचते ही शंख, घंटा आदि की ध्वनि होने लगी। गाड़ी के ठहरने पर महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय के संग स्वामीजी उतरे। पूज्य मालवीयजी नंगे सिर और नंगे पैर आगे-आगे भीड़ हटाते हुए चले। उनके पीछे तपोनिधिजी के दर्शन हुए। आप बिलकुल दिगम्बर थे, देखने से अधिक उम्र मालूम नहीं पड़ती थी। आँखों में एक विचित्र ज्योति है। स्टेशन पर एकत्रित जनता बार बार "हर हर महादेव" की ध्वनि करने लगी। आपके पीछे-पीछे स्टेशन पर एकत्रित कोई २०० की जनता जाने लगी।

बाहर एक सजी हुई जोड़ी खड़ी थी। जोड़ी पर कदली स्तम्भ आदि लगे हुए थे। उसी पर आप लोग बैठे। पीछे-पीछे कुछ स्वयंसेवक और आगे-आगे कुछ स्वयंसेवक शंख घंटा आदि बजाते जा रहे थे। उसके पीछे-पीछे मोटर, साइकिल, एक्कों की भरमार थी। इस प्रकार स्वामीजी की सवारी धीरे-धीरे बढ़ती चली।

बनारस छावनी स्टेशन से चौक होती हुई सवारी विश्वविद्यालय चली गयी। वहाँ श्री तपोनिधिजी के लिए स्वतंत्र पर्णकुटी बनकर तैयार थी। उसी में आप उतरे।

११ मार्च को आप के ही द्वारा उस मन्दिर का शिलान्यास होगा, जो विश्वविद्यालय क्षेत्र में बनने वाला है।"

तपोनिधि सदा मौन ही रहते थे। कहते हैं कि वे एक गुलाब का फूल लेकर मूक भाषण करते थे। उनके लिए बनी विशेष पर्णकुटी में पहुँचते ही उन्होंने सांकेतिक भाषा द्वारा पूज्य मालवीयजी को समझा दिया कि शिलान्यास के लिए चुना गया स्थान ठीक नहीं है, अत: किसी दूसरे स्थान का चयन करना होगा। पूज्य मालवीयजी ने यह कार्य विश्वविद्यालय के तत्कालीन मानित सुपरिण्टेंडिंग इंजीनियर श्री ज्वाला प्रसादजी[१] को सौंप दिया। श्री ज्वाला प्रसादजी ने दो दिन अथक परिश्रम कर अपनी रिपोर्ट दे दी। उसमें उन्होंने लिख दिया था कि कौन-कौन सा स्थान शिलान्यास के लिए उपयुक्त हो सकता है। मानचित्र में उन्होंने इन सभी स्थानों को दर्शाया

१. राजा ज्वालाप्रसादजी बाद में अप्रैल १९३६ से नवम्बर १९४० तक विश्वविद्यालय के उपकुलपति (Pro.Vice-Chancellor) रहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

था। उस मानचित्र को मालवीयजी ने तपोनिधिजी के सम्मुख रख दिया। ध्यान लगाकर देखने के बाद तपोनिधिजी ने उस मानचित्र में एक स्थान निर्दिष्ट कर दिया। तदन्तर १० मार्च १९३१ को प्रात: १० बजे कुलपति पूज्य मालवीयजी की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति (कौंसिल) की एक आकस्मिक बैठक हुई। बैठक में कौंसिल के दस सदस्य उपस्थित थे। श्री ज्वालाप्रसादजी की रिपोर्ट पढ़ी गयी और मालवीयजी ने स्पष्ट किया कि किन कारणों से शिलान्यास के लिए दूसरा स्थान चुनना आवश्यक है। पूज्य मालवीयजी के साथ सभी सदस्य मन्दिर परिसर गये और शिलान्यास के लिए चुने गये नये स्थान को देखा। परिवर्तित स्थान की पुष्टि करते हुए कौंसिल में प्रस्ताव पारित हो गया; कौंसिल की स्वीकृति मिल गयी[१]। मालवीयजी सब कार्य विधिवत् करते थे, सबको साथ लेकर चलते थे। इसका एक उदाहरण यह है।

अब चले देखें, मन्दिर परिसर में ७ मार्च से हो रहे उत्सव के कार्यक्रमों को। विश्वविद्यालय के अर्धवृत्ताकार ले-आउट प्लैन में मन्दिर के लिए निर्धारित क्षेत्र में खेतों को अच्छी तरह साफ करके एक बहुत सुन्दर

---

१. Minutes of the emergency meeting of the Council
Tuesday, the 10th March, 1931, at 10 A.M.

Present

Pandit M.M. Malaviya, Vice-Chancellor, in the Chair,
Principal C.A. King, Prof. K.K. Mathur,
Babu Durga Prasad, Pt. Lachhmandas,
M.M. Pandit Pramathanath Tarkabhushan, Pt. I.D. Tiwary,
Prof. P.K. Dutt, Prof. P.B. Adhikari,
Prof. S.C. De, Prof. S.V. Puntambekar, and B. Baijnath Das, by invitation

169. The Vice-Chancellor laid before the Council the letter of B. Jwala Prasad, Honorary Superintending Engineer on the question of the sites of the temple. The Members of the Council visited the spot and the Vice-Chanceller explained the reasons for the change he proposed for the sites :

Resolved that the site suggested be approved.

The meeting was then dissolved .

M.M. Malaviya
Chairman

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पण्डाल बना था। पूरा स्थान एक बड़े आश्रम के समान दीख रहा था। आश्रम में खेमों के अतिरिक्त ३ पर्णकुटियाँ बनी थीं। इनमें भी बिजली की रोशनी थी।

बड़े बड़े महात्मा और दूर दूर के गण्यमान्य सज्जन पहले से ही आश्रम में डेरा डाले हुए थे। प्रमुख आगन्तुकों में मालदह के स्वामी सदानन्दजी, कलकत्ते के सेठ नारायणदास बाजोरिया, पंजाब के बाबा करतार सिंह, गोरखपुर के श्री जयदयाल गोयनका और बाबा रामदासजी थे।

तपोनिधिजी की पर्णकुटी के पीछे एक पर्णकुटी में पूज्य मालवीयजी सपरिवार विराजमान थे। रात दिन तपोनिधिजी की सेवा करने का भार उन्होंने अपने ऊपर ले लिया था।

रुद्रमहायाग के लिए एक यज्ञशाला बनी थी जिसमें बड़ा होमकुंड बना था। यज्ञशाला के ऊपर राष्ट्रीय तिरंगा झंडा फहरा रहा था। यह एक विशेष महत्त्व की बात थी।

प्रातःकाल रुद्रमहायाग प्रारम्भ हो जाता था। पचासों वैदिक ब्राह्मण वेदध्वनि के साथ हवन कर रहे थे। एक दूसरी पर्णशाला में अष्टादश पुराण, चारों वेद, दशोपनिषद्, महाभाष्य, महाभारत, श्रीमद्भागवत, श्रीमद्भगवद्गीता, रामायण इत्यादि का पाठ और गायत्री मन्त्र का जप हो रहा था। अनेक वैदिक ब्राह्मण, विद्वान् एवं विद्यार्थी इस कार्य में लगे थे। ये सभी कार्यक्रम दिन में बारह बजे तक चलते थे। सन्ध्या समय भजन और कथा होती थी। पूज्य मालवीयजी स्वयं कथा-प्रवचन करते थे। प्रातः काल में तपोनिधिजी को साथ लेकर पूज्य मालवीयजी यज्ञशाला में अवश्य आते थे। ८,९ और १० मार्च तीनों दिन यही कार्यक्रम था। श्रद्धालु बड़ी संख्या में नित्य आते थे।

तपोनिधिजी की कुटिया के पास दर्शकों का ताँता लगा रहता था। हिमालय में गंगोत्री से तीन सौ मील आगे काण्डकी में एक गुफा में रहने वाले तपोनिधिजी को काशी के ताप में रहना अत्यन्त कष्टकर प्रतीत होता था। पूज्य मालवीयजी ने उनकी कुटिया को पूर्णतः ठंडा रखने के लिए यथाशक्ति सभी उपाय कर दिये थे। परन्तु जब दर्शनार्थी अधिक हो जाते थे और हवा रुक जाती थी तो वे घबरा जाते थे। संकेत से मालवीयजी को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बताते थे कि शीघ्र हिमालय लौटना है परन्तु मालवीयजी के साग्रहपूर्ण नेत्रों को देखकर वे शान्त हो जाते थे ।

तपोनिधिजी की कुटी के सामने दर्शनार्थियों के द्वारा समर्पित फलों का ढेर लग जाता था । मालवीयजी उन्हें दर्शनार्थियों को प्रसाद रूप में बंटवा देते थे । ७ मार्च के सायंकाल से १० मार्च की रात्रि तक लगातार दर्शनार्थी आते रहे और तपोनिधिजी के दर्शन से पवित्र होकर लौटते रहे ।

चैत्र कृष्ण अष्टमी बुधवार ११ मार्च १९३१ को शिलान्यास का मुहूर्त था । रुद्रयाग की पूर्णाहुति के पश्चात्, मन्दिर के शिलान्यास का कार्य प्रारम्भ हुआ । ठीक साढ़े ग्यारह बजे दिन में तपोनिधि श्री कृष्णाश्रम स्वामीजी महाराज के पवित्र करकमलों से मन्दिर का शिलान्यास कराया गया । जय-जयकार और शङ्खध्वनि से पूरा वायुमण्डल गूँज गया ।

उसी दिन रात्रि २ बजे की गाड़ी से तपोनिधिजी स्वस्थान के लिए रवाना हो गये । उनको विदा करने के लिए विश्वविद्यालय के अनेक अध्यापक और विद्यार्थी, सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल के प्रधानाध्यापक के नेतृत्व में अध्यापक और कुछ विद्यार्थी बनारस छावनी स्टेशन में उपस्थित थे । 'हर हर महादेव' के अनवरत ध्वनि के बीच गाड़ी स्टेशन से छूटी ।

●

तपोनिधि कृष्णाश्रम स्वामीजी ने श्रीविश्वनाथ मन्दिर का शिलान्यास ११ मार्च १९३१ (बुधवार) को किया था । उसके अगले दिन (गुरुवार, १२ मार्च १९३१) दैनिक **'आज'** में निम्नलिखित समाचार प्रकाशित हुआ था :—

हिन्दूमात्र के लिए मन्दिर
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में
नवीन मन्दिर का शिलान्यास

काशी, बुधवार ।

आज ११॥ बजे दिन को हिन्दू विश्वविद्यालय में रुद्रयाग की पूर्णाहुति के बाद, नवीन मन्दिर के शिलान्यास का कार्य आरम्भ हुआ । इस मन्दिर में महादेव, दुर्गा और लक्ष्मीनारायण की मूर्तियाँ रहेंगी और सब वर्णों तथा उपवर्णों के लोग पूजा दर्शन आदि कर सकेंगे । इसका शिलान्यास तपोनिधि श्रीकृष्णाश्रम स्वामीजी महाराज के करकमलों से कराया गया । तपोनिधि आज ही रात २ बजे की गाड़ी से स्वस्थान के लिए रवाना हो जायेंगे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४

मालवीयजी के इच्छानुसार मन्दिर का शिलान्यास तो एक तपस्वी महात्मा के कर-कमलों से सम्पन्न हो गया परन्तु मन्दिर का निर्माण कार्य तुरन्त प्रारम्भ नहीं हो सका। मालवीयजी देश के अन्य अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों में पूर्णतः व्यस्त हो गये।

सन् १९३० के प्रारम्भ से ही देश की राजनीति में तेजी आ गयी थी। सन् १९२९ दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में लाहौर में जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस का ४४वाँ वार्षिक अधिवेशन हुआ। उसमें 'पूर्ण स्वराज्य' प्रस्ताव पास हो गया। २६ जनवरी १९३० को पूरे देश में 'पूर्ण स्वराज्य दिवस' अत्यन्त उत्साह के साथ मनाया गया। २ मार्च को गांधीजी ने वाइसराय लार्ड इरविन को एक लम्बा पत्र लिखा। उसमें उन्होंने वाइसराय को बताया कि किस तरह ब्रिटिश सरकार की नीति-रीति के कारण भारत की गरीब जनता परेशान है और कैसे उसकी दशा दयनीय होती जा रही है। एक उदाहरण के रूप में उन्होंने नमक कानून को बताया और कहा कि यह कानून सबसे अधिक अन्यायपूर्ण है। अन्त में उन्होंने वाइसराय को अपना निर्णय बता दिया कि वे गलत सरकारी नीतियों के विरुद्ध एक सविनय अवज्ञा आन्दोलन १२ मार्च १९३० को प्रारम्भ करेंगे जो पूर्णरूप से अहिंसात्मक होगा; आन्दोलन की शुरुआत नमक कानून तोड़कर होगी। इस पत्र का कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला और १२ मार्च १९३० को गाँधीजी साबरमती आश्रम के ७९ साथियों के साथ नमक कानून तोड़ने के लिए डांडी यात्रा में निकल गये। मार्ग में जनता ने इनका भव्य स्वागत किया। ६ अप्रैल को समुद्रतट स्थित डांडी में नमक कानून तोड़कर गांधीजी ने सत्याग्रह शुरू कर दिया। लगभग चार सप्ताह तक वे अपना काम करते रहे पर जब उन्होंने धरसन्ना में सत्याग्रह करने का निर्णय किया, तब ११ मई को सरकार ने उन्हें गिरफ्तार करके यरवदा जेल भेज दिया।

उधर पेशावर में २३ अप्रैल को एक बड़ा जलूस निकला। अगले

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दिन खान अब्दुल गफ्फार खां (जो सीमांत गांधी के नाम से प्रसिद्ध थे) गिरफ्तार कर लिये गये। इसपर क्रुद्ध होकर जनता ने फिर जलूस निकाला। जलूस पर फौज ने गोली चलायी। लगभग २२५ आदमी घायल हुए। इस अत्याचार के विरुद्ध सम्पूर्ण भारतवर्ष में १६ मई १९३० को पेशावर दिवस मनाया गया। प्रयाग में एक बड़ी सभा में मालवीयजी का एक ओजपूर्ण भांषण हुआ। तदनन्तर वे सीमाप्रान्त की यात्रा में निकल गयै। मार्ग में लगभग प्रत्येक स्टेशन में उनका भव्य स्वागत हुआ। उनका भाषण सुनने के लिए बड़ी संख्या में लोग स्टेशनों में उनकी प्रतीक्षा करते हुए खड़े रहते थे। पंजाब सरकार ने मालवीयजी को सीमा प्रान्त में प्रवेश नहीं करने दिया। रावलपिण्डी में २५ मई १९३० को एक महत्त्वपूर्ण भाषण देकर श्रीनगर होते हुए मालवीयजी प्रयाग लौट गये।

३० जून १९३० को सरकार ने कांग्रेस कार्यकारिणी समिति को गैरकानूनी घोषित कर दिया। पंडित मोतीलाल नेहरू गिरफ्तार कर लिये गये और नैनी जेल भेज दिये गये। जवाहरलाल नेहरू भी वहीं सजा काट रहे थे। मोतीलाल नेहरू ने अपने स्थान पर सरदार वल्लभ भाई पटेल को कांग्रेस का स्थानापन्न अध्यक्ष मनोनीत कर दिया। सरदार पटेल ने मालवीयजी को मोतीलाल नेहरूजी के स्थान पर कांग्रेस कार्यकारिणी समिति (वर्किंग कमिटी) का सदस्य मनोनीत किया। जुलाई के अन्तिम सप्ताह में बम्बई में सरदार पटेल की अध्यक्षता में कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक हुई। मालवीयजी इस बैठक में भाग लेने के लिए बम्बई गये। तीन दिन तक बैठक हुई। उसके बाद १ अगस्त १९३० को लोकमान्य तिलक जयन्ती मनाने के लिए, ३१ जुलाई की रात में श्रीमती हंसा मेहता के नेतृत्व में एक बड़ा सार्वजनिक जलूस निकाला गया जिसमें सरदार पटेल, मालवीयजी, श्रीमती कमला नेहरू आदि अमेक सम्मिलित थे। मार्ग में एक स्थान पर बम्बई सरकार ने दफा १४४ लगाकर जलूस को रोक दिया। जलूस में बहुत सी महिलाएँ भी थीं। महिलाओं समेत जलूस में शामिल सभी लोग वहीं सड़क पर बैठ गये। सारी रात वर्षा होती रही परन्तु जलूस वहीं डटा रहा। पहली अगस्त को प्रातःकाल बम्बई के गृह-सचिव की आज्ञा से मालवीयजी समेत सभी नेताओं को (और कुछ महिलाओं को भी) पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। तदनन्तर लाठी चार्ज कर लोगों को तितर-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बितर किया गया। अनेक लोग घायल हुए। मालवीयजी तथा अन्य नेताओं पर मुकदमा चला। ७ अगस्त १९३० को मालवीयजी पर १०० रुपये का आर्थिक दण्ड (जुर्माना) लगा, जुर्माना न देने पर १५ दिन का कारावास। मालवीयजी ने जेल जाना ही ठीक समझा। वे जेल भेज दिये गये परन्तु अगले दिन ही उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया। किसी ने जुर्माने का रुपया चुका दिया था। मालवीयजी की गिरफ्तारी और सज़ा की सूचना पाकर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के लगभग सौ विद्यार्थी सत्याग्रह करने के लिए बम्बई चल दिये, पर उनके वहाँ पहुँचते-पहुँचते मालवीयजी मुक्त कर दिये गये थे। सभी विद्यार्थी मालवीयजी के साथ काशी आ गये।

तदनन्तर कांग्रेस कार्यकारिणी समिति की एक बैठक दिल्ली में बुलायी गयी। मालवीयजी उस बैठक में भाग लेने के लिए दिल्ली पहुँचे। २७ अगस्त १९३० को जब बैठक चल रही थी तब कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्य गिरफ्तार कर लिये गये। २८ अगस्त को मालवीयजी सहित कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्यों को छः-छः मास की सजा दे दी गयी। मालवीयजी पहले दिल्ली के जेल में रखे गये परन्तु लगभग दो सप्ताह बाद उन्हें वहाँ से नैनी सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया। १३ सितम्बर १९३० को सायंकाल वे नैनी जेल में बन्द कर दिये गये। ७० वर्ष की अवस्था में जेलवास मालवीयजी के लिए प्रतिकूल सिद्ध हुआ। नवम्बर के महीने में वे बीमार पड़ गये। तब ब्रिटिश प्रधानमन्त्री रमसे मेकडोनाल्ड के आदेश पर भारत सरकार ने उन्हें २३ दिसम्बर सायंकाल के समय जेल से रिहा कर दिया। २४ दिसम्बर १९३० को वे काशी पहुँच गये और विश्वविद्यालय में उन्होंने अपना कार्य तुरन्त संभाल लिया। डाक्टरों ने उन्हें सलाह दी थी कि वे कम से कम एक महीने तक पूरी तरह आराम करें, परन्तु मालवीयजी के लिए विश्वविद्यालय की सेवा ही तो दवा थी।

कुछ ही दिनों के बाद उन्हें समाचार प्राप्त हो गया कि तपोनिधि कृष्णाश्रम स्वामीजी विश्वविद्यालय परिसर में प्रस्तावित विश्वनाथ मन्दिर का शिलान्यास करने के लिए मार्च महीने के प्रारम्भ में काशी आवेंगे। मांलवीयजी शिलान्यास की तैयारी में लग गये।

इसी बीच सन् १९३१ जनवरी के अन्तिम सप्ताह में भारत सरकार ने गांधीजी और कांग्रेस कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्यों को जेल से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुक्त कर दिया। २६ जनवरी १९३१ को 'पूर्ण स्वराज्य दिवस' का प्रथम वार्षिकोत्सव अत्यन्त उत्साहपूर्वक पूरे देश में मनाया गया।

१७ फरवरी को वाइसराय और गांधीजी के बीच बातचीत शुरू हुई। पंद्रह दिन तक वार्ता चलती रही, समझौता हो गया और समझौता पत्र पर ४ मार्च १९३१ को दोनों पक्षों ने हस्ताक्षर कर दिये। यह समझौता 'गांधी-इरविन पैक्ट' के नाम से प्रसिद्ध है।

देश में एक प्रकार से शान्ति का वातावरण बन गया। विश्वविद्यालय में तपोनिधि का पदार्पण ७ मार्च १९३१ को हुआ, मन्दिर का शिलान्यास ११ मार्च १९३१ को सुसम्पन्न हुआ। भगवान् विश्वनाथ की कृपा से मालवीयजी की एक अभिलाषा पूरी हो गयी। अगले महीने से ही वे पुनः देश की सेवा में जुट गये।

१९३१ अप्रैल के आरम्भ में मालवीयजी के पास द्वितीय 'गोलमेज कांफरेन्स' में भाग लेने के लिए आमंत्रण पत्र आ गया। (गोलमेज कांफरेन्स का प्रथम सत्र लन्दन में १२ नवम्बर १९३० से १९ जनवरी १९३१ तक चला। कांफरेन्स की आखिरी बैठक में भारत के कुछ प्रतिनिधियों ने ब्रिटिश सरकार से अनुरोध किया कि भारत में शान्ति का वातावरण स्थापित करने के लिए राजनीतिक बन्दी छोड़ दिये जायें। भारत के राजनीतिज्ञों से भी अनुरोध किया गया कि वे संघर्ष बन्द कर देश की राजनीतिक समस्याओं को सुलझाने में रचनात्मक योगदान दें। इसी को ध्यान में रखते हुए गांधीजी आदि जेल से रिहा कर दिये गये थे।)

गोलमेज कान्फरेन्स का दूसरा सत्र ७ सितम्बर १९३१ से आयोजित था। कांग्रेस ने गांधीजी को इसमें भाग लेने के लिए अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर दिया। मालवीयजी, श्रीमती सरोजिनी नायडू और अली इमाम व्यक्तिगत रूप में इस कान्फरेन्स में भाग लेने के लिए तैयार हुए।

गोलमेज कान्फरेन्स में भाग लेने के लिए गांधीजी और मालवीयजी बम्बई से लन्दन के लिए २९ अगस्त १९३१ को 'राजपूताना जहाज' से रवाना हुए। वे १२ सितम्बर को लन्दन पहुँचे। लन्दन में मालवीयजी 'बिरला हाउस' में ठहरे और गांधीजी 'किंगस्ले हॉल' में। कान्फरेन्स का कार्य ७ सितम्बर को प्रारम्भ हो चुका था। अधिवेशन का पूर्ण सत्र २८ नवम्बर से शुरू हुआ। गांधीजी ने अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहा—"भारत को वास्तविक स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। उसे किसी भी नाम से पुकारा जा सकता है। गुलाब किसी दूसरे नाम से भी उतनी ही सुगन्ध देगा पर वह स्वतन्त्रता का गुलाब होना चाहिए। मैं ग्रेट ब्रिटेन का साथी बनना चाहता हूँ लेकिन मैं ठीक-ठीक उस स्वतन्त्रता का उपभोग करना चाहता हूँ जिसका उपभोग आप कर रहे हैं।"

मालवीयजी ने अत्यन्त संतप्त हृदय से कहा कि "यहाँ भारत की समस्या पूरी तौर पर समझी नहीं गयी है। यहाँ वह वातावरण ही नहीं है जिसमें भारत की जनता की सही दशा और भारत की माँगों पर सच्चाई से विचार हो सके। हम उनको उनकी दयनीय दशा से तब तक उबार नहीं सकते जब तक हमारे हाथ में हमारे सभी विषयों के प्रबन्ध का पूरा अधिकार न हो। भारत की जनता को स्वतंत्रता का अधिकार उतना ही है, जितना आपको।" अन्त में उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की कि वे अंग्रेजों को ऐसी शक्ति, सद्बुद्धि और उदारता प्रदान करें जिससे भारत की जनता को अपना अधिकार प्राप्त हो जाय।

कान्फरेन्स के अन्तिम पूर्ण सत्र में १ दिसम्बर १९३१ को ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ने अपना नीति-वक्तव्य दे दिया जो भारत के लिए निराशाजनक ही था। कान्फरेन्स का कोई सार्थक परिणाम नहीं निकला। गांधीजी दिसम्बर ६ तारीख को ही लन्दन से चलकर २८ दिसम्बर को बम्बई वापस आ गये। उसके एक सप्ताह बाद १३ दिसम्बर को मालवीयजी रेलगाड़ी द्वारा लन्दन से चलकर फ्रांस, जरमनी, इटली आदि होते हुए, विशेषकर वहाँ कुछ विश्वविद्यालयों को भी देखते हुए, इटली में नेपल्ज़ से समुद्री जहाज द्वारा यात्रा करते हुए बम्बई पहुँचे। वहाँ से जनवरी १४, १९३२ को प्रयाग आ गये।

गांधीजी के बम्बई पहुँचने के सोलह दिन के अन्दर ही मालवीयजी भी भारत आ गये परन्तु इसी बीच भारत में राजनीतिक स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गयी थी। विवरण सुनें। बम्बई पहुँचने के अगले दिन ही गांधीजी ने वाइसराय महोदय को एक तार भेजा और उनसे मिलने की इच्छा व्यक्त की। लार्ड इरविन के बाद लार्ड विल्लिंगडन वाइसराय बनकर आ गये थे। उन्होंने गांधीजी की शर्तों पर उनसे मिलने से इनकार कर दिया। तब २ जनवरी १९३२ को कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने सविनय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अवज्ञा के लिए एक १२ सूत्रीय कार्यक्रम निश्चित किया। विदेशी कपड़ो का बहिष्कार, हाथ कता और हाथ का बुना खद्दर ही पहनना, ब्रिटिश माल और संस्थाओं का बहिष्कार, शराब तथा विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना, इस कार्यक्रम के मुख्य अंश थे। जनता से विशेषरूप से कहा गया कि सविनय अवज्ञा (Civil Disobedience) पूरी तरह अहिंसात्मक हो, जलूस और प्रदर्शनों में वही लोग भाग लें जो अपनी जगह से बिना हटे लाठी और गोली का प्रहार सहने को तैयार हों।

४ जनवरी १९३२ को प्रात:काल गांधीजी और सरदार पटेल गिरफ्तार कर लिये गये। भारत सरकार द्वारा चार नये अध्यादेश जारी कर दिये गये। कांग्रेस और उससे सम्बद्ध संस्थाएँ गैर कानूनी घोषित कर दी गयीं और उनकी चल तथा अचल सम्पत्तियाँ जब्त कर ली गयीं। नये अध्यादेश, पुराने अध्यादेशों से अधिक कड़े, तीव्र और व्यापक थे। अराजकता से देश की रक्षा करना, सुशासन के ढाँचे को बनाये रखना, इनका उद्देश्य बताया जाता था।

जहाज से उतर कर बम्बई में पदार्पण करते ही मालवीयजी को इन सब बातों की पूरी जानकारी मिल गयी। वे अत्यन्त दुखी हो गये। प्रयाग पहुँचने के पश्चात् उन्होंने वाइसराय को एक लम्बा पत्र २९ जनवरी १९३२ को लिखा। देश की स्थिति का विस्तार से विश्लेषण करते हुए उन्होंने वाइसराय से अनुरोध किया कि "दमन नीति का अवलम्बन करके आपने जो भारी भूल की है उसको सुधारें, काले कानूनों को वापस लें, महात्मा गांधी तथा नये कानून के अन्तर्गत कैद किये गये सभी स्त्री, पुरुष और बालकों को छोड़ दें, जो जुर्माने वसूल हो चुके हों वे लौटा दिये जाँय, और देश में पुन: कानून का राज्य स्थापित किया जाय।" परन्तु वाइसराय महोदय टस से मस नहीं हुए। दमन नीति चलती रही।

मालवीयजी स्वदेशी आन्दोलन में लग गये। उनकी अध्यक्षता में अखिल भारतीय स्वदेशी संघ स्थापित हुआ। २९ मई १९३२ को अखिल भारतीय स्वदेशी दिवस मनाया गया। मालवीयजी ने लोगों को बताया "स्वदेश का अर्थ है अपना देश और स्वदेशी का मतलब है अपने देश के लोग और अपने देश की चीजें।" "जनता का आर्थिक सुधार, किसान और कारखानेदार दोनों के उद्योग धंधों की उन्नति पर निर्भर है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वदेशी आन्दोलन में संलग्न लोगों को दोहरे कामों को ध्यान में रखना चाहिए, किसानों की भलाई के लिए घरेलू उद्योग-धन्धों को भी प्रोत्साहित करना चाहिए ।''

१७ अगस्त १९३२ को ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री मेकडोनाल्ड ने अपना सांप्रदायिक निर्णय घोषित किया । इस सांप्रदायिक निर्णय (Communal Award) द्वारा उन्होंने भारतीय निर्वाचकों को मुसलमान, दलित वर्ग, पिछड़ा वर्ग, भारतीय ईसाई, सिक्ख, व्यावसायिक और औद्योगिक वर्ग, जमींदार, मजदूर, विश्वविद्यालय आदि में विभाजित कर दिया और इन सबके लिए पृथक् निर्वाचन पद्धति द्वारा पृथक् प्रतिनिधित्व की व्यवस्था कर दी । एन्ग्लो-इण्डियन और यूरोपियनों के लिए भी पृथक् प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की । व्यावसायिक वर्ग को प्रजातीयता के आधार पर विभाजित कर दिया गया था ।

इस घोषणा के पांच महीने पूर्व ११ मार्च १९३२ को जेल से ही गांधी जी ने भारतमंत्री सर सामुएल होर को चेतावनी दे दी थी कि यदि पृथक् निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा हरिजनों के प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की जायगी तो वे उसके विरोध में आमरण अनशन करेंगे । हरिजनों के लिए पृथक् निर्वाचन क्षेत्र करना हिन्दू समाज को विघटित कर देगा और यह हरिजनों के लिए भी हानिकर होगा । इस चेतावनी के बावजूद सांप्रदायिक निर्णय की घोषणा हो गयी ।

१८ अगस्त १९३२ को गांधीजी ने ब्रिटेन के प्रधान-मंत्री मेकडोनाल्ड को सूचित कर दिया कि वे २० सितम्बर के दोपहर से किसी प्रकार का भोजन लिये बिना आमरण अनशन करेंगे । यदि ब्रिटिश सरकार अपनी इच्छा से या जनमत के दबाव पर अपने निर्णय को बदल देगी, तब यह आमरण अनशन बन्द कर दिया जायगा ।

८ सितम्बर को प्रधानमंत्री मेकडोनाल्ड ने गांधीजी को एक पत्र लिखा और समझाने की कोशिश की कि उनकी योजना में दलित वर्ग हिन्दू समाज के अंग बने रहेंगे, हर प्रकार से हिन्दू समाज की एकता बनायी रखी गयी है । परन्तु गांधीजी उनसे सहमत नहीं हुए । उन्होंने कह दिया कि "दलित वर्गों के लिए पृथक् चुनाव क्षेत्र की स्थापना में मुझे विष के इंजेक्शन का बोध होता है, जो हिन्दू समाज को नष्ट करने के लिए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभिकल्पित है, और जो दलित वर्गों का कोई हित करने वाला नहीं है।" उन्होंने प्रधानमंत्री मेकडोनाल्ड को यह भी सूचित कर दिया कि वे अनशन के अपने निर्णय पर अटल हैं।

ये सब पत्र १२ सितम्बर को प्रकाशित कर दिये गये। गांधीजी के आमरण अनशन की सूचना ने देश में तहलका मचा दिया। बहुत से सज्जनों ने गांधीजी से अनुरोध किया कि वे आमरण अनशन न करें परन्तु गांधीजी अपने निर्णय पर दृढ़ रहे। २० सितम्बर १९३२ को दिन के १२ बजे गांधीजी ने अनशन आरम्भ कर दिया।

मालवीयजी भी साम्प्रदायिक निर्णय मानने को तैयार नहीं थे। उन्होंने १९ सितम्बर को बम्बई में हिन्दू समाज के नेताओं का एक सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित हुआ कि सब प्रकार से प्रयत्न कर गांधीजी के जीवन को बचाना होगा और हिन्दू समाज में अस्पृश्यता के रूप में आये हुए कलंक को दूर करना होगा। मालवीयजी के अथक प्रयत्न से समाज के सभी वर्गों का सहयोग उन्हें प्राप्त हो गया। हरिज़नों के प्रमुख नेता डाक्टर अम्बेदकर और श्री एम० सी० राजा नें भी उनका साथ दिया। गांधीजी की अनुमति से और सबकी सहमति से २४ सितम्बर को एक समझौता पत्र तैयार हुआ। मालवीयजी ने उसमें प्रथम हस्ताक्षर किया, उसके बाद तेजबहादुर सप्रू, एम्. आर. जयकर, अम्बेदकर, एम्. सी. राजा, श्रीनिवासन्, चक्रवर्ति राजगोपालाचारी, राजेन्द्रप्रसादजी, घनश्यामदास बिड़ला आदि सज्जनों ने हस्ताक्षर किये। उसी दिन (२४ सितम्बर १९३२) ब्रिटिश प्रधानमन्त्री मेकडोनाल्ड, वाइसराय और कुछ अन्य लोगों को भी तार द्वारा इस समझौते की सूचना दे दी गयी। यह समझौता 'पूना पेक्ट' के नाम से प्रसिद्ध है।

ब्रिटिश मंत्रिमण्डल ने इस समझौते पर विचार विमर्श किया और २६ सितम्बर को उसकी स्वीकृति मिल गयी। तदनन्तर ही गांधीजी ने अपना अनशन २६ सितम्बर को प्रातःकाल समाप्त किया। २७ सितम्बर से २ अक्टूबर १९३२ तक पूरे देश में एक सप्ताह तक 'अस्पृश्यता निवारण सप्ताह' मनाया गया।

इसके पश्चात् मालवीयजी सभी समुदायों के बीच एकता लाने के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिए प्रयत्न करते रहे। उनके नेतृत्व में इलाहाबाद में 'एकता कान्फरेन्स' का आयोजन हुआ। उनके अनुरोध पर कांग्रेस के वयोवृद्ध नेता विजयराघवाचार्यजी ने सम्मेलन की अध्यक्षता की। २४ दिसम्बर १९३२ को एकता सम्मेलन कमेटी ने सर्वसम्मति से एक समझौता किया। परन्तु ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल में भारतमन्त्री सर सामुएल होर ने घोषित कर दिया कि भारत के केन्द्रीय असेम्बली में पृथक् निर्वाचन द्वारा मुसलमानों के लिए एक तिहाई स्थान सुरक्षित किये जायेंगे। इस घोषणा का मुसलमानों में व्यापक स्वागत हुआ और एकता सम्मेलन के सब निर्णय निरर्थक हो गये। स्पष्ट हो गया कि ब्रिटिश सरकार हिन्दू-मुस्लिम एकता नहीं चाहती थी।

आमरण अनशन की समाप्ति के पश्चात् पुनः गांधीजी पर जेल की पाबन्दियाँ लगा दी गयीं। पर गांधीजी के आग्रह पर अस्पृश्यता निवारण से सम्बद्ध उनके कार्यों पर से सरकार ने प्रतिबन्धों को हटा लिया।

❁ ❁ ❁ ❁

२ मई १९३३ को गांधीजी ने आत्मशुद्धि तथा हरिजनोद्धार के निमित्त इक्कीस दिन उपवास करने का निर्णय किया और उसके लिए मालवीयजी का आशीर्वाद माँगते हुए एक तार भेजा। मालवीयजी उस समय अस्वस्थ थे। अतः चाहते हुए भी गांधीजी से मिलने के लिए वे तुरन्त जाने में असमर्थ थे। उन्होंने गांधीजी को पहले एक तार भेजा, फिर एक पत्र लिखा और कहा–

"परमात्मा की आप पर कृपा हो। मेरी यह निश्चित धारणा है कि भगवान् ने ही आपको इस निर्णय का आदेश दिया है। मैं उन्हीं से प्रार्थना कर रहा हूँ कि वे इस महान् व्रत को सफलतापूर्वक पूरा करने में आपको शक्ति दें, और मेरा विश्वास है वे आपको शक्ति देंगे। मेरा अनुरोध है कि आप अनन्य भाव हो जावें। जो भगवान् हमारा रक्षक और सहायक है, उसके अतिरिक्त अन्य सभी विचारों को यथाशक्ति अपने मन से निकाल दीजिये। द्वादशाक्षर मन्त्र के जप के साथ-साथ दिन के किसी भाग में श्वास-प्रश्वास के साथ 'सोहम्' का भी अभ्यास कीजिये। प्रकाश और जीवन की धारा को अन्तर में बनाये रखने में यह अभ्यास सहायक होगा। कुछ महान् तपसियों की दृष्टि आपके तप की ओर लगी है, और असंख्य जन आपकी सफलता के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। अपने पास के वातावरण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को सब प्राणियों में स्थित वासुदेव की चर्चा के अतिरिक्त अन्य बातों से मुक्त रखिये। भगवान् के इस आदेश और प्रतिज्ञा को ध्यान में रखिये–मच्चित: सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात् तरिष्यामि'। स्वास्थ्य ठीक होते ही आप से मिलूंगा।

गांधीजी ने तार द्वारा उत्तर दिया "आपके आशीर्वाद मेरे लिए सुखकारी हैं। मैं आदेश का तत्त्वत: पालन कर रहा हूँ। बचपन से ही राम नाम मेरा ताबीज रहा है। मैं अच्छा हूँ और शान्ति का अनुभव करता हूँ। अनुरोध करता हूँ कि आप आने का कष्ट न करें।"

८ मई १९३३ को गांधीजी ने अपना २१ दिन का अनशन प्रारम्भ कर दिया, और उनके परामर्श पर कांग्रेस के स्थानापन्न अध्यक्ष एम०एस० अणे ने छ: सप्ताह के लिए सत्याग्रह स्थगित कर दिया। सरकार ने भी गांधीजी को जेल से रिहा कर दिया। गांधीजी ने आशा व्यक्त की कि सरकार अध्यादेश वापस ले लेगी और सब राजनीतिक कैदियों को छोड़ देगी। परन्तु सरकार ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

गांधीजी के इस अनशन ने हरिजनोद्धार के आन्दोलन में नयी जान डाल दी। सारे देश में कांग्रेस के कार्यकर्ताओं ने अस्पृश्यता के निवारण के लिए जोरदार काम किया। २९ मई को हरिजन दिवस मनाया गया।

जुलाई १९३३ के दूसरे सप्ताह में गांधीजी ने लोगों को सामूहिक सत्याग्रह के स्थान पर व्यक्तिगत सत्याग्रह करने की सलाह दी। उन्होंने अपने साबरमती आश्रम को भंग कर दिया और १ अगस्त को व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया। उसी दिन वे गिरफ्तार कर लिये गये, और उन्हें एक वर्ष की सजा दे दी गयी। जेल में १६ अगस्त से उन्होंने पुन: अनशन शुरू कर दिया। वे बीमार हो गये और सरकार ने बिना किसी शर्त के उन्हें जेल से मुक्त कर दिया। तदनन्तर उन्होंने निश्चय किया कि एक वर्ष तक वे मुख्य रूप से हरिजनोद्धार का कार्य ही करेंगे।

९ नवम्बर १९३३ को गांधीजी 'हरिजन सेवक संघ' के तत्त्वावधान में हरिजनोद्धार के निमित्त पूरे देश में भ्रमण करने निकले। इस भ्रमण में उन्होंने लगभग १२,५०० मील की पद-यात्रा की और आठ लाख रुपये हरिजन कार्य के लिए जमा किये। सभी जगह उन्होंने अस्पृश्यता-निवारण के धार्मिक और नैतिक स्वरूप की व्याख्या करते हुए सवर्ण हिन्दुओं से अनुरोध किया कि जन्मजात अस्पृश्यता की घृणित भावना को त्याग कर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हरिजनों के साथ आत्मीयता का व्यवहार करें। बार-बार उन्होंने लोगों को समझाया कि ऊँच-नीच और अस्पृश्यता की भावनाएँ हिन्दू समाज के लिए अभिशाप हैं, और उनसे छुटकारा पाना समाज और जीवन की पवित्रता और उत्कर्ष के लिए अन्यन्त आवश्यक है।

पदयात्रा करते हुए गांधीजी २९ जुलाई १९३४ को काशी पहुँचे। काशी में कांग्रेस कार्यकारिणी समिति की एक महत्त्वपूर्ण बैठक हुई। तत्पश्चात् १ अगस्त १९३४ को तिलक जयन्ती के दिन सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल (कमच्छा) के खेल के मैदान में एक बहुत बड़ी सभा हुई। इस सभा का आयोजन बड़े तौर पर चल रहा था। काशी की जनता गांधीजी के दर्शन के लिए लालायित थी। अत: पचास हजार लोगों के बैठने के लिए समुचित प्रबन्ध किया गया था। गांधीजी, मालवीयजी तथा अन्य प्रमुख सज्जनों और वक्ताओं के बैठने के लिए १० फीट से भी अधिक ऊँचा मंच मनाया गया था ताकि दूर से भी लोग गांधीजी के दर्शन अच्छी तरह प्राप्त कर सकें। लाउडस्पीकर की भी अच्छी व्यवस्था की गयी थी।

अस्पृश्यता-निवारण विषय के सम्बन्ध में बोलने के लिए 'वर्णाश्रम स्वराज्य संघ' के पण्डित देवनायकाचार्य इस सभा में पधारे थे। गांधीजी के भाषण के पश्चात् उनका भाषण हुआ। पं० देवनायकाचार्य संस्कृत के अच्छे विद्वान थे, अच्छे वक्ता भी थे। उन्होंने अपने भाषण में अन्त्यजोद्धार के कार्य को शास्त्र विरुद्ध प्रमाणित करने का प्रयत्न किया। तदनन्तर मालवीयजी का भाषण हुआ। उन्होंने शास्त्रों से अनेक प्रमाण देते हुए कहा कि "हमारे सनातन धर्म की महिमा है कि मनुष्य चाहे किसी जाति में रहे, किन्तु धर्म से चले तो उसका उद्धार हो सकता है। स्कन्द पुराण में इसका प्रमाण है कि यदि चाण्डाल सदाचारी हो, तो वह ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान आदर पाने योग्य हो जाता है। यदि ऐसा हो सकता है तो फिर हम अपने अछूत भाइयों को सदाचारी क्यों न बनायें ? हम उनको सदाचारी बनाकर दिखा दें कि भाई छोटे से छोटा भी हो उसे भी हमारा सनातन धर्म ऊँचा उठा सकता है। आज चार पाँच करोड़ हिन्दू अछूत कहे जाते हैं। इनमें अछूता वे ही लोग हैं जो मैले काम करने वाले हैं। वे मानव जाति की वह सेवा करते हैं जो कोई नहीं कर सकता। यदि वे एक दिन भी अपना काम बन्द कर दें, तो हमारी क्या दुर्गति होगी, विचार कर लो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवान् ने कहा है—'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः'–अपने अपने काम में लगे हुए लोग मेरा पद पा सकते हैं ।"[१]

मालवीयजी तो सनातन धर्म के मूल सिद्धान्तों का प्रचार बहुत पहले से कर रहे थे । इसी निमित्त उन्होंने सनातन धर्म सभा की स्थापना की थी । सन् १९२३ और १९२४ में उन्होंने काशी और प्रयाग में विद्वत् परिषदें आयोजित कीं और उनसे शुद्धि,समाज सुधार तथा निम्न वर्गों की उन्नति के सम्बन्ध में शास्त्रों पर आधारित व्यवस्थाएँ लेने का प्रयत्न किया । नासिक, प्रयाग, काशी आदि स्थानों में उन्होंने स्वयं तथाकथित अस्पृश्यों के साथ सब वर्णों और जातियों के हिन्दुओं को मन्त्र दीक्षा दी । सन् १९३२ में शिवरात्रि के दिन काशी के दशाश्वमेधघाट पर बहुत से हरिजनों को मन्त्र दीक्षा दी । उन्होंने हरिजनोद्धार के निमित्त 'अन्त्यजोद्धारविधि' नाम से एक पुस्तक भी लिखी जिसका प्रकाशन, तिलक जयन्ती के दिन १ अगस्त १९३४ को महात्मा गांधीजी के उपर्युक्त सभा के अवसर पर हुआ । यह एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है ।

१ अगस्त १९३३ के दिन व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ करते ही गांधीजी को गिरफ्तार किया गया था और ठीक एक वर्ष बाद १ अगस्त १९३४ को उनकी हरिजनोद्धार-पदयात्रा का समापन काशी में हुआ ।

कांग्रेस का नियमित अधिवेशन राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में बम्बई में २६ से २८ अक्टूबर १९३४ तक होनेवाला था । इसके पूर्व ३१ मार्च १९३१ को सरदार वल्लभ भाई पटेल की अध्यक्षता में कराची में कांग्रेस का नियमित अधिवेशन हुआ था । उसके बाद मार्च १९३२ में कांग्रेस के स्थानापन्न अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद की गिरफ्तारी होते ही उनके आदेश पर श्रीमती सरोजिनी नायडू ने कांग्रेस के संचालन का उत्तरदायित्व ग्रहण किया । २६ मार्च १९३२ को वे काशी आयीं और मालवीयजी से मिलीं । देश की स्थिति और कांग्रेस के भावी कार्यक्रम पर

---

१. लेखक उस समय सेन्ट्रल हिन्दू स्कूल में दसवीं कक्षा का विद्यार्थी था । गांधीजी के दर्शन के साथ साथ उनके, मालवीयजी के और अन्य भाषणों को सुनने का भी सुअवसर उसे प्राप्त हुआ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उन्होंने मालवीयजी से लगभग पाँच घंटे बात की। काशी से दिल्ली जाकर वहाँ के कांग्रेस कार्यकर्ताओं से बातचीत करने के बाद श्रीमती नायडू ने निश्चय किया कि शीघ्र ही दिल्ली में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन किया जाय। मालवीयजी इस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये। मालवीयजी ने स्वीकृति दे दी। २४ अप्रैल १९३२ को अधिवेशन होना था।

भारत सरकार ने कांग्रेस की स्वागत समिति को गैर-कानूनी घोषित करते हुए उसके पदाधिकारियों को गिरफ्तार कर लिया। श्री सरोजिनी नायडू को आदेश हुआ कि वे बम्बई से बाहर न जाँय। परन्तु सरकार के आदेश की उपेक्षा करते हुए वे २२ अप्रैल को बम्बई से दिल्ली के लिए रवाना हो गयीं। मार्ग में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें एक वर्ष की सजा दे दी गयी। कांग्रेस अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए चले हजारों प्रतिनिधियों को रास्ते में रोक लिया गया। दिल्ली में कार्यकर्ताओं को ढूंढ़-ढूंढ़ कर गिरफ्तार किया गया।

मालवीयजी से भी कहा गया कि वे दिल्ली न जावें परन्तु उन्होंने इसकी उपेक्षा की और मोटर गाड़ी (car) से दिल्ली के लिए रवाना हो गये। उनके साथ उनके सुपुत्र श्री गोविन्द मालवीय, डा० मंगल सिंह और श्री रंजीत पण्डित भी थे। पर दिल्ली पहुँचने के पूर्व ही जमनापुल पर चारों व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये। आठ दिनों तक हिरासत में रखने के बाद ही उन सबको मई पहली तारीख को मुक्त किया गया।

इन सब सतर्कताओं के बावजूद २४ अप्रैल १९३२ को अधिवेशन के निश्चित समय पर दिल्ली के चांदनी चौक में घंटाघर के समीप लगभग १५० कांग्रेस कार्यकर्ता एकत्र हुए। अहमदाबाद से आये एक सज्जन रणछोड़दास की अध्यक्षता में अधिवेशन विधिवत् सम्पन्न हुआ। दस मिनट के अन्दर, पूर्ण स्वराज्य, अहिंसा, सविनय अवज्ञा और बाइकाट के सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित किये गये। इतने में पुलिस वहाँ पहुँच गई। सब कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये। इन कार्यकर्ताओं ने पुलिस गाड़ी में चलते-चलते अधिवेशन में पारित प्रस्तावों की छपी प्रतियाँ जनता में वितरण कीं। नौ बजे से बारह बजे तक बहुत से जत्थों ने चाँदनी चौक पहुँचने का प्रयत्न किया। सभी जत्थे गिरफ्तार कर लिये गये। दोपहर १२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बजे तक ८०० कार्यकर्ता गिरफ्तार हो गये। सायंकाल पुन: कांग्रेसी जत्थों ने आना शुरू किया। इस बार पुलिस ने उन जत्थों को मार-पीट कर तितर-वितर कर दिया। किसी को गिरफ्तार नहीं किया।

इस एक दिन की घटना से ही सरकार की आँखें खुल गयीं। भारत मन्त्री सर सामुएल होर ने पार्लमेन्ट में घोषित किया कि सरकार उन भारतीयों से सहयोग करने को तैयार हैं जो पार्लमेन्ट द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार सहयोग करने को राजी हों।

दिल्ली से प्रयाग लौटते ही मालवीयजी ने ३ मई को एक लम्बा वक्तव्य प्रसारित किया जिसमें उन्होंने कहा कि दिल्ली का अधिवेशन साबित करता है कि कांग्रेस ने लोगों के दिलों में कितनी गहरी जड़ जमा ली है, और इस बड़ी संस्था की ओर से जो आन्दोलन हो रहा है उसे दबाने का प्रयत्न करना ब्रिटिश सरकार जैसी शक्तिशाली सरकार के लिए भी कितना व्यर्थ है। भारतमन्त्री के वक्तव्य की समालोचना करते हुए उन्होंने कहा कि "भारतमंत्री और प्रधानमन्त्री ने पार्लमेन्ट में जिन संरक्षणों पर जोर दिया है उन्हें गांधीजी और कांग्रेस कार्यकारिणी समिति भारत के लिए सन्तोषजनक नहीं समझते, और उन्हें चुपचाप मान लेना कांग्रेस के लिए सम्भव नहीं है। कांग्रेस तो भारत के लिए इंगलैंड तथा स्वाधीन देशों के समान ही स्वाधीनता चाहता है। भारत और इंगलैंड के बीच मित्रता की यही शर्त है और यही दोनों के लिए सम्मानयुक्त है। भारतमन्त्री को भारतीयों के स्वभाव के सम्बन्ध में भ्रम है। अभी भारत के अस्सी हजार पुत्र और पुत्रियाँ जेल में बन्द हैं। ऐसी स्थिति में क्या कोई स्वाभिमानी भारतीय, भारत में नयी योजना को कार्यान्वित करने के लिए सरकार से कोई समझौता कर सकता है?"[१]

मालवीयजी ने अपने उपर्युक्त लम्बे वक्तव्य में कांग्रेस की गतिविधियों के बारे में और सरकार की दमनकारी कार्रवाइयों के बारे में विस्तृत वर्णन किया था। उन्होंने उस वक्तव्य को छपवाकर इंगलैंड और अमेरिका को भेजा ताकि वहाँ की जनता को भी उनकी जानकारी मिल सके। उसकी ४००० प्रतियों को वी.के. कृष्ण मेनन को भेजा। वे (श्री मेनन) उस समय

---

१. 'दैनिक आज' काशी ४ मई १९३२।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लन्दन में इण्डिया लीग के तत्त्वावधान में प्रकाशित हो रहे पाक्षिक पत्रिका के सम्पादक थे ।

मालवीयजी ने मई १९३२ से चार पाँच महीने तक सरकार के कारनामों को प्रकाश में लाने के लिए इतना काम किया कि भारत सरकार के तत्कालीन गृहसचिव मॉरिस हालेट को यह आभास होने लगा कि मालवीयजी संघर्ष पर उतारू हो गये हैं ।

१७ अगस्त १९३२ को ब्रिटिश प्रधानमन्त्री मेकडोनाल्ड ने सांप्रदायिक निर्णय की घोषणा कर दी । उस निर्णय को निरस्त करने के लिए मालवीय जी ने जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया उसका उल्लेख पहले ही हो चुका है । कांग्रेस के अध्यक्ष होने के कारण उन्हें उस कार्य में विशेष सफलता मिली ।

कांग्रेस का अगला अधिवेशन कलकत्ते में ३१ मार्च १९३३ को होने वाला था । उसकी भी अध्यक्षता के लिए मालवीयजी ही चुने गये । इसकी घोषणा १९ मार्च को हुई । २४ मार्च को बनारस के जिला मैजिस्ट्रेट ने उन्हें कलकत्ता जाने से रोकने के लिंए एक निषेधाज्ञा जारी कर दी । उसकी अवज्ञा करते हुए मालवीयजी २९ मार्च को कलकत्ते के लिए रवाना हो गये । उनके साथ श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू[१] और डाक्टर सैयद महमूद भी थे । आसन्सोल स्टेशन पर पुलिस ने तीनों को गिरफ्तार कर लिया । अन्य स्थानों से कांग्रेस के लिए आ रहे लगभग एक हजार प्रतिनिधियों को भी रास्ते में ही रोक दिया गया । स्वागत समिति के अधिकारी और सदस्य भी पकड़ लिये गये । जो प्रतिनिधि किसी तरह कलकत्ता पहुँच पाये उनमें से अधिकांश अधिवेशन के पहले ही गिरफ्तार कर लिये गये ।

फिर भी पूर्वघोषित समय और स्थान पर कई सौ प्रतिनिधि एकत्र हो गये । श्रीमती नेल्ली सेनगुप्ता की अध्यक्षता में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हो गया । पुलिस ने उपस्थित प्रतिनिधियों को बुरी तरह आहत किया । तिस पर भी प्रतिनिधि लोग डटे रहे । विषय-निर्धारणी समिति द्वारा निश्चित किये गये सभी प्रस्ताव पारित होने के बाद ही अधिवेशन की समाप्ति हुई ।

मालवीयजी ने इस अधिवेशन के लिए जो अध्यक्षीय भाषण तैयार

---

१. जवाहरलाल नेहरू की माताजी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किया था, उसमें सरकार की दमन नीति की निन्दा करते हुए उन्होंने कहा था—"अनुमानत: पिछले पन्द्रह महीनों से कई हजार स्त्रियों और बच्चों सहित लगभग एक लाख बीस हजार मनुष्य गिरफ्तार किये गये हैं। सरकार इस प्रकार आन्दोलन बन्द नहीं कर सकेगी।" "भारत और इंगलैंड का सम्बन्ध विषाक्त आधार पर स्थित है, और सरकार के लिए उचित मार्ग यही होगा कि वह अपना व्यवहार जनता के अनुकूल, स्वतन्त्रता, समानता, पारस्परिक सद्भाव और मैत्री के आधार पर स्थिर करे। वे द्वेष और दुर्भाव से दूर हों।"

आसन्सोल स्टेशन पर गिरफ्तार किये गये मालवीयजी, श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू और डाक्टर सैयद महमूद को जेल से ३ अप्रैल को रिहा किया गया। श्रीमती सेनगुप्ता को छ: महीने की कड़ी सजा दी गयी। मालवीयजी आसन्सोल से सीधे कलकत्ता गये और वहाँ पुलिस के सिपाहियों और यूरोपियन सारजेन्टों के अत्याचारों और अमानुषिक व्यवहार की जाँच की, आहतों के बयान लिये। वाराणसी वापस आने पर उन्होंने ९ अप्रैल १९३३ को ६ पृष्ठ का एक लम्बा वक्तव्य प्रकाशित किया। उनके वक्तव्य के बाद दिल्ली में लेजिस्लेटिव असेम्बली के २५ सदस्यों ने भारत सरकार के गृहमन्त्री को लिखा कि मालवीयजी के आरोपों की जाँच करायी जाय। गृहसदस्य सर हेरी हेग ने उन्हें उत्तर दिया कि बंगाल सरकार को इस निमित्त लिखा जा रहा है। मई १९३३ में ब्रिटिश पार्लमेन्ट के एक सदस्य के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए भारतमन्त्री सर सामुएल होर ने कहा कि बंगाल सरकार ने इन सब आरोपों को गलत बताया है। इस पर मालवीयजी ने भारतमन्त्री को लिखा कि सभी आरोपों की सार्वजनिक खुली जाँच करायी जाय और यदि सरकार इसके लिए तैयार नहीं है तो उन पर मुकदमा चलाया जाय। भारतीय समाचार-पत्रों ने भी सरकार की निन्दा करते हुए मालवीयजी की मांगों को दोहराया। बहुत से आहत सज्जनों ने भी मालवीयजी के वक्तव्य की पुष्टि करते हुए समाचार-पत्रों में अपनी आपबीती का वर्णन किया। आरोपों की सार्वजनिक खुली जाँच कराने के लिए सरकार तैयार नहीं हुई। जाँच होती तो सरकार की दुर्गति ही होती। मामला वहीं रोक दिया गया। मालवीयजी हर एक बात को बड़ी गहराई, गम्भीरता एवं सावधानी के साथ विचार करने के पश्चात् ही अन्तिम निर्णय पर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पहुँचते थे। सरकार के लिए उनका सामना करना अत्यन्त कठिन था। अतः सरकार चुप हो गयी।

कांग्रेस के इतिहासकार डा० पट्टाभि सीतारामय्या[1] ने लिखा है कि सन् १९३२-३३ के संकट काल में "मालवीयजी अपने दुर्दमनीय आत्मबल और अपूर्व शक्ति द्वारा कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को प्रोत्साहित और अनुप्राणित करते रहे।" "सन्देह और कठिनाई के अवसरों पर कांग्रेस के कार्यकर्ता मालवीयजी के पास जाते थे और कभी निराश होकर नहीं लौटते थे।

❁ ❁ ❁ ❁

कांग्रेस के लिए जो संकट काल जनवरी १९३२ से प्रारम्भ हुआ था वह सितम्बर १९३३ से धीरे-धीरे दूर हो रहा था। गांधीजी के हरिजनोद्धार यात्रा के समय देश की स्थिति सामान्य हो गयी थी। इस बीच लन्दन में गोलमेज़ कान्फरेन्स का तीसरा सत्र नवम्बर १९३२ से २४ दिसम्बर १९३२ तक चला। तदनन्तर भारत में शासनसुधारों के लिए ब्रिटिश सरकार के प्रस्तावों को एक श्वेत-पत्र (White-Paper) द्वारा १७ मार्च १९३३ को प्रकाशित कर दिया गया।

९ मई १९३४ को मालवीयजी ने लाहौर से एक वक्तव्य प्रसारित किया जिसमें उन्होंने श्वेत-पत्र की आलोचना करते हुए कहा कि "उसका उद्देश्य है—उत्तरदायी सरकार का रूप और उपकरण प्रदान करते हुए सारे अधिकार को ग्रेट ब्रिटेन के प्रतिनिधियों के हाथ में बनाये रखना, और भारतीय संविधान की ऐसी नींव डालना जिस पर लोकप्रिय स्वशासन या उत्तरदायी शासन का निर्णय कभी हो ही नहीं सके, और भारत को डोमीनियन स्टेटस जैसी स्वतंत्रता भी प्राप्त न हो सके।"

जून १९३४ में कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने ब्रिटिश सरकार के श्वेत-पत्र और साम्प्रदायिक निर्णय पर एक प्रस्ताव पास किया। उसमें घोषित किया गया कि श्वेतपत्र किसी तरह भी भारतीय जनता की इच्छा को अभिव्यक्त नहीं करता, सभी राजनीतिक पार्टियों ने इसे न्यूनाधिक तिरस्कृत कर दिया है, कांग्रेस के लक्ष्य से तो यह बहुत कम है। श्वेत-पत्र का एकमात्र सन्तोषजनक विकल्प, वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचित संविधान सभा से तैयार किया संविधान है। इस सभा में यदि आवश्यक हो तो प्रमुख

1. Dr. B. Pattabhi Sitaramayya : History of the Indian National Congress.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि अपने अल्पसंख्यक निर्वाचकों द्वारा चुने जा सकते हैं।

कांग्रेस ने मेकडोनाल्ड के साम्प्रदायिक निर्णय को भी सर्वथा दोषपूर्ण बताया पर परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निश्चय किया कि कांग्रेस साम्प्रदायिक निर्णय को न तो मंजूर करती है और न रद्द करती है।

मालवीयजी को यह निर्णय पसन्द नहीं था। वे चाहते थे कि कांग्रेस ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के सांप्रदायिक निर्णय को स्पष्ट शब्दों में रद्द करे और उसकी घोषणा करे। कांग्रेस का नेतृत्व उसके लिए उस समय तैयार नहीं था। अतः मालवीयजी ने कांग्रेस पार्लमेंटरी बोर्ड से और उनके सहयोगी एम०एस० अणे ने कांग्रेस कार्यकारिणी समिति से त्यागपत्र दे दिये। दोनों ने निश्चय किया कि राष्ट्रहित को ध्यान में रखते हुए सांप्रदायिक निर्णय का जोरदार विरोध तुरन्त आरम्भ कर देना चाहिए।

१८ और १९ अगस्त १९३४ को कलकत्ते में मालवीयजी की अध्यक्षता में आयोजित राष्ट्रवादियों की सभा में 'कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी' बनाने का निश्चय किया गया। इस पार्टी की आवश्यकता क्यों हुई इसका स्पष्टीकरण करते हुए मालवीयजी ने एक विस्तृत वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें उन्होंने बताया कि–

१. कांग्रेस पार्लमेंटरी बोर्ड की सदस्यता से उनके त्यागपत्र का यह आशय नहीं है कि उन्होंने कांग्रेस से चिरकाल के लिए एकदम सम्बन्ध त्याग दिया है। कांग्रेस से सांप्रदायिक निर्णय के अतिरिक्त और किसी बात में उनका मतभेद नहीं है।
२. कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति तथा पार्लमेंटरी बोर्ड ने इस साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में जिस नीति को स्वीकार किया है, वह कांग्रेस की उस नीति और सिद्धान्त के सर्वथा प्रतिकूल है जिसका पालन और पोषण वह अपने जन्म-दिन से कर रही है। यह नीति अवश्य ही देश के कल्याण के लिए "घोर घातक" और "विशेषतः हिन्दुओं के लिए दोषपूर्ण और अग्राह्य" है।
३. जिस दल को वे संघटित करना चाहते हैं, वह केवल राष्ट्रीय भाव के आधार पर काम करेगा, और उस प्रयत्न का सर्वथा साथ देगा जो साम्प्रदायिक प्रश्न का सर्वसम्मत निर्णय करनेके लिए प्रयत्नशील

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहेगा ।

४. उनका दल 'नेहरू रिपोर्ट' की संस्तुतियों का समर्थन करता है और वह साम्प्रदायिक प्रश्न पर बातचीत के समय, जुलाई सन् १९३१ की कांग्रेस की उस योजना पर काम करेगा जिसे महात्मा गांधी ने गोलमेज कान्फरेन्स के सामने रखा था और जिसका समर्थन राष्ट्रीय विचार के देश के सभी मुसलमानों ने किया था ।

कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन २६ से २८ अक्टूबर १९३४ तक बम्बई में आयोजित था । राजेन्द्रप्रसाद इस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये थे । सन् १९३१ के बाद यह कांग्रेस का नियमित अधिवेशन था । इस अधिवेशन में एक लाख से अधिक लोगों की उपस्थिति अनुमानित थी । अतः अभूतपूर्व तैयारियाँ हुईं । बम्बई के समुद्रतट पर कांग्रेस नगर बसाया गया । एक अति विशाल पण्डाल का निर्माण हुआ । राजेन्द्रप्रसादजी की अध्यक्षता में उत्साहपूर्ण वातावरण में २८ अक्टूबर को अधिवेशन आरम्भ हुआ । इस अधिवेशन में मुख्य चर्चा साम्प्रदायिक निर्णय और श्वेतपत्र से सम्बद्ध विषयों पर होने वाली थी । इस अधिवेशन के बाद ही केन्द्रीय असेम्बली के सदस्यों का चुनाव होने वाला था । तत्सम्बन्धी विषय भी विचारणीय था ।

तीनों विषयों के सम्बन्ध में प्रस्ताव पेश हुए । मालवीयजी ने साम्प्रदायिक निर्णय के विरोध में संशोधन प्रस्तुत किया । उन्होंने कहा कि प्रस्ताव की यह दलील कि श्वेत-पत्र के साथ ही साम्प्रदायिक निर्णय समाप्त हो जायगा, गलत है क्योंकि ये दोनों चीजें अलग है । ब्रिटिश सरकार ने स्पष्ट कर दिया है कि साम्प्रदायिक निर्णय उनका अन्तिम निर्णय है, यद्यपि श्वेतपत्र में परिवर्तन हो सकता है । साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में कांग्रेस की अनिश्चित धारणा का अन्तिम परिणाम उसकी परोक्ष स्वीकृति ही होगा ।

उन्होंने यह भी कहा कि सन् १९३२ में उन्होंने एकता कान्फरेंस द्वारा साम्प्रदायिक समस्याओं के समाधान का प्रयत्न किया था, जो करीब-करीब सफल भी हो गया था, और वे अब भी विभिन्न सम्प्रदायों के बीच सर्वसम्मत समाधान निकालने के लिए तैयार हैं । मात्र एक घरेलू मामले को निर्णय कराने के लिए किसी बाहरी व्यक्ति के पास जाना ठीक नहीं है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बहुत से लोगों ने मालवीयजी का समर्थन किया । कई व्यक्तियो ने कड़ा विरोध किया । अन्त में कांग्रेस ने भारी बहुमत से मूल प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जिसमें कहा गया था कि कांग्रेस उस समय तक जब तक मतभेद बना रहता है, साम्प्रदायिक निर्णय को न स्वीकार कर सकती है, न रद्द कर सकती है ।

श्वेत-पत्र को कांग्रेस ने तिरस्कृत कर दिया । कौंसिलों में प्रवेश करने के सम्बन्ध में गांधीजी का विचार था कि यदि कांग्रेस का ध्यान केवल कौंसिलों के कार्य में लगा रहेगा तो स्वराज्य नहीं मिल सकता । स्वराज्य तो जनता की व्यापक चेतना द्वारा ही आ सकता है । परन्तु उन्होंने देखा कि बहुत से लोग कौंसिलों में काम करने के पक्ष में है । अत: कांग्रेस के सदस्यों को चुनाव में भाग लेकर कौंसिलों में प्रवेश करने की अनुमति मिल गयी । २५ सदस्यों का एक पार्लमेंटरी बोर्ड गठित हुआ और निश्चित हुआ कि यह बोर्ड अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधीन काम करेगा ।

सरदार पटेल ने मालवीयजी से अनुरोध किया कि वे कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी को विघटित कर दें परन्तु वे उसके लिए सहमत नहीं हुए । उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध उनका अभियान जारी रहेगा । नेशनलिस्ट पार्टी का संगठन करते समय ही गांधीजी की सलाह मालवीयजी ने मान ली थी कि वे कांग्रेस से अलग न हों परन्तु साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध कार्य कर सकते हैं और उसे निरस्य करने के लिए प्रयत्न कर सकते हैं ।

कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन के बाद ही केन्द्रीय असेम्बली के सदस्यों का चुनाव था । बिहार, संयुक्त प्रान्त, पंजाब, महाराष्ट्र के बहुत से कांग्रेस कार्यकर्ता साम्प्रदायिक निर्णय पर मालवीयजी के विचार का ही समर्थन करते थे । परन्तु इन प्रान्तों में कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी को संघटित करने के लिए समय नहीं था । केवल बंगाल में ही उस समय तक मालवीयजी अपनी पार्टी का संघटन कर पाये थे । वहाँ उनकी पार्टी को चुनावों में अच्छी सफलता प्राप्त हुई । कुल मिलाकर कांग्रेस पार्टी को ४४ स्थान प्राप्त हुए । कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी ११ स्थान पर विजयी रही । चुनाव के बाद भी साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध मालवीयजी का प्रचार जारी रहा । मालवीयजी की प्रेरणा से २३-२४ फरवरी १९३५ को दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध एक सम्मेलन आयोजित हुआ। इस प्रकार पूरे वर्ष देश में साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध तीव्रता से कार्य हो रहे थे।

इसी बीच ब्रिटिश पार्लमेन्ट में भारत का नया शासन-विधान (Government of India Act 1935) ४ अगस्त १९३५ को पास हो गया। नये कानून के अनुसार भारत के सभी प्रान्तों के विधान सभाओं के लिए चुनाव सन् १९३७ के प्रारम्भ में होने की सम्भावना थी। १४ से १६ अप्रैल १९३६ तक जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुई कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में निश्चय हुआ कि इस चुनाव में भाग लेकर अधिक से अधिक स्थान प्राप्त करना चाहिए ताकि ब्रिटिश सरकार को स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जाय कि एक मात्र कांग्रेस ही पूरे भारत की जनता का प्रतिनिधित्व करती है।

अगस्त १९३६ में कांग्रेस का चुनाव घोषणा-पत्र प्रकाशित कर दिया गया। चुनाव घोषणापत्र में कहा गया–"पूरे शासन-विधान को अलग रखकर साम्प्रदायिक निर्णय कबूल नहीं हो सकता, क्योंकि वह स्वाधीनता और लोकतांत्रिक शासन के सिद्धान्तों के विरुद्ध है। इसके कायम रहने से देश को छिन्न-भिन्न करनेवाली और घातक शक्तियाँ पैदा होंगी, आर्थिक प्रश्नों का स्वाभाविक विकास रुक जायगा, समाज की प्रगति कुन्द हो जायगी। राष्ट्रीय विकास में बाधा उपस्थित होगी और हिन्दुस्तान की एकता पर कुठाराघात होगा। इससे हिन्दुस्तान के किसी सम्प्रदाय या जाति को कोई वास्तविक लाभ नहीं होगा। इसका अन्तिम परिणाम उस जाति के लिए भी हानिकर होगा जिसके लाभ के ख्याल से यह बनाया जा रहा है। इससे उस तीसरे दल को लाभ होगा जो हम पर शासन कर रहा है और हमें लूट रहा है।"

आगे चल कर घोषणा पत्र में यह भी कहा गया—"इस साम्प्रदायिक निर्णय से जो स्थिति पैदा हो गयी है, उसका उचित ढंग से मुकाबला करने के लिए हमें स्वाधीनता के संग्राम को और भी संगीन बनाना चाहिए और साथ ही साथ इस समस्या को सुलझाने के लिए कोई उपाय ढूँढ़ निकालना चाहिए जो सभी जातियों और सम्प्रदायों को कबूल हो, और जिससे भारत की एकता की नींव मजबूत हो"। कांग्रेस ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि उसके सदस्य साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध आवश्यक होने पर वोट करेंगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कांग्रेस की यह घोषणा मालवीयजी की महत्त्वपूर्ण विजय थी। कांग्रेस और कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी के बीच केवल साम्प्रदायिक निर्णय के प्रश्न पर ही मतभेद था। अब वह मतभेद दूर हो गया। यों भी केन्द्रीय असेम्बली में नेशनलिस्ट पार्टी साम्प्रदायिक निर्णय के प्रश्न को छोड़कर और सब मामलों में कांग्रेस के साथ ही थी।

दिसम्बर सन् १९३६ के अन्त में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन गांधीजी के अनुरोध पर एक ग्रामीण क्षेत्र में आयोजित था। स्थान था महाराष्ट्र के खान्देश जिले में स्थित फ़ैज़पुर। अस्वस्थ होते हुए भी मालवीयजी वहाँ पहुँच गये और उन्होंने चर्चा में भाग भी लिया। एक प्रस्ताव पर बोलते हुएं उन्होंने कहा—"हम अंगरेजी राज्य सहन नहीं कर सकते। हम अपना शासन अपने आप कर सकते हैं। शासन करने की हमारी वह शक्ति क्षीण नहीं हो गयी है जो हमारे पूर्वजों में थी। संसार के सभी देशों ने यहाँ तक कि मिस्र ने भी स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है। क्या कोई भी भारतीय ऐसा है, जिसका हृदय भारत की दुर्दशा देखकर बार-बार न रोता हो? सामर्थ्य और बुद्धि रखते हुए भी हम लोग अंग्रेजों के गुलाम हैं, क्या हमें लज्जा नहीं आती? हम ब्रिटेन से मित्रता चाहते हैं। यदि ब्रिटेन हमारी मित्रता चाहता है, तो हम तैयार हैं, किन्तु यदि वह हमें अपने अधीन रखना चाहता है, तो हम उसकी मित्रता नहीं चाहते। आप स्मरण रखें कि जब तक अंग्रेज आप से डरेंगे नहीं तब तक यहाँ से नहीं भागेंगे। अपनी कायरता को दूर भगा दो, बहादुर बनो और प्रतिज्ञा करो कि आजाद होकर ही हम दम लेंगे।"

"मैं पचास वर्ष से कांग्रेस के साथ हूं। संभव है, मैं बहुत दिन तक न जिऊँ और अपने जी में यह कलंक लेकर मरूं कि भारत अभी भी पराधीन है। फिर भी मैं आशा कर सकता हूँ कि मैं इस भारत को स्वतंत्र देख सकूंगा"।

फ़ैज़पुर कांग्रेस के समय मालवीयजी अपने जीवन के छिहत्तरवें वर्ष में प्रवेश कर चुकें थे। इसी के साथ उन्होंने सक्रिय राजनीति से छुट्टी ले ली। परन्तु अन्य अनेक सामाजिक और धार्मिक संस्थाओं के संचालन की चिन्ता तो उन्हें बनी ही रही।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५

अब हम अपना ध्यान काशी विश्वविद्यालय पर केन्द्रित करते हैं। सन् १९३० से सन् १९३४ के अन्त तक मालवीयजी देश के अन्य महत्त्वपूर्ण कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण अपने विश्वविद्यालय के लिए अधिक समय नहीं दे पाते थे। अत: विश्वविद्यालय के उपकुलपति आचार्य आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुवजी ने सारा कार्यभार अपने ऊपर ले लिया था। आचार्य ध्रुवजी संस्कृत वाङ्मय के प्रतिभाशाली विद्वान् थे। अँगरेजी साहित्य के भी अच्छे ज्ञाता थे। वे अपनी उदार और प्रगतिशील धारणाओं, सद्भावनाओं और सौजन्य के लिए प्रसिद्ध थे। सभी उनका आदर करते थे। आचार्य ध्रुवजी सन् १९१९ में विश्वविद्यालय की सेवा में संस्कृत के यूनिवर्सिटी प्रोफेसर तथा सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के प्रिंसिपल के रूप में सम्मिलित हुए थे। सन् १९२० में वे विश्वविद्यालय के कोर्ट द्वारा उपकुलपति (Pro.Vice-Chancellor) निर्वाचित हुए। मालवीयजी उस समय कुलपति (Vice-Chancellor) थे। विश्वविद्यालय के कोर्ट द्वारा उपकुलपति के पद पर बार-बार ध्रुवजी का ही निर्वाचन होता रहा। अत: सन् १९२० से ३१ मार्च १९३६ तक लगातार १६ वर्ष मालवीयजी को उनका सहयोग प्राप्त होता रहा। अगस्त १९३० में मालवीयजी की गिरफ़्तारी और सज़ा हो जाने के पश्चात् विश्वविद्यालय को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। आचार्य ध्रुवजी ने सभी कठिनाइयों का सामना धैर्य और साहस के साथ किया। भारत सरकार ने विश्वविद्यालय को देय वार्षिक अनुदान को रोक दिया तो विश्वविद्यालय के सभी अध्यापकों ने एकात्मभाव दिखाते हुए लिख कर दे दिया कि जब तक आवश्यकता हो तब तक वे बिना वेतन के काम करते रहेंगे। ध्रुवजी के अथक प्रयत्न से सरकार ने मार्च १९३१ में रुके हुए अनुदान का भुगतान कर दिया।

सन् १९३४ के पश्चात् ही मालवीयजी राजनीतिक कार्य से कुछ खाली हुए। सन् १९३५ में विश्वविद्यालय में अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य होने थे। ८ फरवरी १९३५ को वसन्त पञ्चमी के दिन पूर्वाह्न में विश्वविद्यालय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का शिलान्यास दिवस अति उत्साह के साथ मनाया गया । अपराह्न मे दीक्षान्त समारोह में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर को डी०लिट० की मानित उपाधि से अलंकृत किया गया । गुरुदेव का विचारशील और गंभीर दीक्षान्त भाषण हुआ । उसके दो दिन बाद १० फरवरी को विश्वविद्याल में काञ्ची के शङ्कराचार्य ने पदार्पण किया । मालवीयजी ने स्वयं उनका स्वागत करते हुए स्वागताभिनन्दन पत्र पढ़कर समर्पित किया । इस तरह बहुत से सुन्दर कार्यक्रम साल भर होते रहे ।

विश्वविद्यालय के प्रशासन को सुधारने के उद्देश्य से उसी वर्ष विश्वविद्यालय के केन्द्रीय कार्यालय का पुनर्गठन भी सम्पन्न हुआ । कार्याधिक्य के कारण आचार्य ध्रुवजी ने चाहा कि वे सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के प्रिंसिपल के कार्य भार से मुक्त हो जाँय । मालवीयजी मान गये । अर्थशास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान् के.वी. रंगस्वामि अय्यंगार अर्थशास्त्र के प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष तथा सेन्ट्रल हिन्दू कालेज के प्रिंसिपल नियुक्त हुए । उन्होंने १ जुलाई १९३५ को अपना कार्यभार संभाल लिया । उस समय सेन्ट्रल हिन्दू कालेज ही विश्वविद्यालय का सबसे बड़ा कालेज था । विज्ञान के विभाग भी उसी कालेज के अन्तर्गत थे ।

अत्यावश्यक कार्यों को पूरा करने के बाद मालवीयजी का ध्यान विश्वनाथ मन्दिर के निर्माण की ओर गया । ११ मार्च १९३१ को शिलान्यास होने के बाद उस दिशा में कोई काम नहीं हुआ था । बहुत वर्षों के पूर्व जब मन्दिर का मानचित्र बना था तो उसके निर्माण के लिए अनुमानित व्यय लगभग रु० ३ लाख आकलित था । सन् १९२९ के अप्रैल महीने में रामनवमी के दिन मालवीय जी ने विश्वविद्यालय के लिए दूसरे करोड़ रुपये की माँग करते हुए जनता के नाम एक अपील जारी की थी (Appeal for a Second Crore) । उस अपील में उन्होंने मन्दिर निर्माण के लिए रु० ३ लाख का ही उल्लेख किया था । धीरे-धीरे नक्शे में परिवर्तन होते रहे । यह भी निश्चय हुआ कि पूरे शिखर पर सफेद संगमरमर ही लगे । इन सब कारणों से ज्ञात हुआ कि मन्दिर के निर्माण के लिए कम से कम दस लाख रुपये की आवश्यकता होगी । सन् १९३१-३२ में महाराज नेपाल से विश्वविद्यालय के लिए दो लाख रुपये का एक अनुदान प्राप्त हुआ था । उस समय मालवीयजी को यह संकेत मिला था

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कि सन् १९३४ या १९३५ में नेपाल नरेश से विश्वविद्यालय के लिए १३-१४ लाख रुपये का एक बड़ा अनुदान मिल सकता है। दुर्भाग्यवश १४ जनवरी १९३४ को मकर संक्रान्ति के दिन अपराह्न लगभग सवा दो बजे भारतवर्ष में एक भीषण भूकम्प हुआ। इसे उत्तरी बिहार भूकम्प के नाम से जाना जाता है। इस भूकम्प में नेपाल की भी बड़ी क्षति हुई। करोड़ों की सम्पत्ति नष्ट हो गयी। ऐसी स्थिति में नेपाल नरेश से विश्वविद्यालय को किसी प्रकार का अनुदान मिलना लगभग असंभव ही था।

मन्दिर निर्माण के लिए परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थीं। दीर्घ विचार करने के बाद मालवीयजी इस निर्णय पर पहुँचे कि मन्दिर निर्माण के लिए विश्वविद्यालय के पास जो कुछ धन उपलब्ध है उससे कार्य प्रारम्भ कर दिया जाय, बाद में हरि इच्छा। विश्वविद्यालय के मानित सर्वोच्च अभियन्ता (Honorary Chief Engineer) राजा ज्वालाप्रसाद से उन्होंने तुरन्त विचार-विमर्श किया। मन्दिर निर्माण के लिए आवश्यक नक्शे आदि विश्वविद्यालय भवन निर्माण विभाग में तैयार होने लगे।

सन् १९३६ के फरवरी के महीने में महाशिवरात्रि के दिन मालवीयजी ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि मन्दिर का निर्माण कार्य अब अविलम्ब प्रारम्भ कर देना चाहिए। एतदर्थ जप, पूजा, पाठ, होम आदि वैदिक कर्म शीघ्र ही एक शुभमुहूर्त में आरम्भ हो गये।

आचार्य ध्रुवजी १ अप्रैल १९२० से उपकुलपति के रूप में विश्वविद्यालय की सेवा कर रहे थे। ३१ मार्च १९३६ को इस पद पर उनके सेवा काल का सोलहवाँ वर्ष पूरा हो रहा था। उनका कार्यकाल नवम्बर १९३७ में ही समाप्त होने वाला था। अभी बीस महीने बाकी थे परन्तु १ अप्रैल १९३६ से ही उन्होंने उस पद को त्याग दिया। और केवल शिक्षणकार्य में ही पूरा समय व्यतीत करने का निश्चय किया। उनके स्थान पर १ अप्रैल १९३६ से राजा ज्वालाप्रसाद उपकुलपति नियुक्त हुए।

राजा ज्वालाप्रसाद का विश्वविद्यालय से घनिष्ठ सम्बन्ध विश्वविद्यालय के प्रारंभिक काल से ही था। सन् १९१६ में विश्वविद्यालय के शिलान्यास के बाद ही विश्वविद्यालय में भवन निर्माण कार्य के लिए एक सुयोग्य और कर्मठ इंजीनियर की आवश्यकता हुई। संयुक्त प्रान्त (यू०पी०) सरकार में ज्वालाप्रसाद इंजीनियर के पद पर कार्यरत थे। उनकी सेवाएँ डेप्युटेशन पर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्वविद्यालय को उपलब्ध हो गयीं और विश्वविद्यालय में उनकी नियुक्ति Superintendent of Works पर हुई। उन्होंने १७ दिसम्बर १९१६ को अपना कार्यभार ग्रहण किया और उसी दिन से विश्वविद्यालय के निर्माण विभाग के कार्य का श्रीगणेश हुआ।

सर गंगाराम के नाम का भी उल्लेख यहाँ आवश्यक है। गंगारामजी का जन्म पंजाब के मँगटनवाला नामक स्थान में सन् १८५१ में हुआ था। (अभी यह स्थान पाकिस्तान में शेखपुरा जिले में है।) लाहौर के गवर्नमेण्ट कालेज में पढ़ने के बाद, वे रूड़की आ गये। वहाँ Thomson Engineering College, Roorkee में इंजीनियरिंग की पढ़ाई समाप्त कर १८७३ में सिविल इंजीनियर बन गये। कुछ वर्षों के बाद वे इंगलैंड गये वहाँ ब्रैडफोर्ड (Bradford) में उच्च शिक्षा पाकर भारत लौटे। सन् १८७३ से सन् १९०३ अर्थात् तीस वर्ष सरकार में सिविल इंजीनियर के रूप में सेवा करने के उपरान्त वे सेवानिवृत्त हुए। इस बीच उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण भवनों का निर्माण किया। सेवा-निवृत्त होने के बाद उनका ध्यान कृषि की ओर गया। फैसलाबाद (अभी पाकिस्तान में है) के पास उन्होंने हज़ारों एकड़ निर्जल भूमि पट्टे पर ले ली और अपने ज्ञान तथा कौशल से सारी अनुर्वर सूखी भूमि को उपजाऊ भूमि में परिवर्तित कर दिया। पंजाब के कृषि क्षेत्र में गंगाराम सुप्रसिद्ध हो गये। वे एक लोकोपकारी व्यक्ति भी थे। लोकोपकार के कार्यों में सदा आगे रहते थे और मुक्त हस्त होकर दान देते थे।

सन् १९११ के अक्टूबर महीने में जब मालवीयजी के नेतृत्व में हिन्दू यूनिवर्सिटी डेपुटेशन लाहौर पहुँचा तब गंगारामजी भी मालवीयजी के सहयोगी बन गये। विश्वविद्यालय की स्थापना में उन्होंने सक्रिय भाग लिया। ४ फरवरी १९१६ को विश्वविद्यालय के शिलान्यास महोत्सव में भी वे सम्मिलित हुए थे। शिलान्यास के अगले दिन से चार दिनों तक (अर्थात् ५ फरवरी से ८ फरवरी तक) हुए सुन्दर व्याख्यान-माला में उन्होंने "Agriculture as a profession"–'एक व्यवसाय के रूप में कृषि' विषय पर एक सारगर्भित व्याख्यान भी ५ फरवरी के सायंकालीन सत्र में दिया। उन्होंने जोर देकर कहा कि देश में सभी को शिक्षित करना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आवश्यक तो है ही, परन्तु उससे भी अधिक आवश्यक है देश को अकाल से पूरी तरह मुक्त करना[१]। इसी दिशा में वे पंजाब में कार्य कर रहे थे।

विश्वविद्यालय के कोर्ट (सर्वोच्च शासी निकाय Supreme Governing Body) की पहली बैठक १२ अगस्त १९१६ को हुई। उस बैठक में गंगाराम कोर्ट और कार्यकारिणी कौंसिल दोनों के सदस्य निर्वाचित हुए। मानित चीफ़ इंजीनियर के रूप में उन्होंने विश्वविद्यालय के निर्माण कार्य का भार अपने ऊपर ले लिया। विश्वविद्यालय के लिए नगवा में भूमि अधिग्रहण से लेकर, भवन निर्माण तक सारा कार्य अत्युत्तम ढंग से सम्पन्न हुआ। उसका श्रेय गंगारामजी और ज्वालाप्रसादजी को ही देना चाहिए। दोनों ने पूर्ण निष्ठा एवं भक्तिभाव से विश्वविद्यालय की सेवा की।

सर गंगाराम ने विश्वविद्यालय में कृषि विद्यालय खोलने के लिए एक योजना भी बनायी थी परन्तु धनाभाव के कारण वह उनके समय में कार्यान्वित नहीं हो सकी थी।

विश्वविद्यालय के अर्धचन्द्राकार ले-आउट प्लैन के केन्द्र में लगभग ५२ एकड़ का एक विस्तृत क्षेत्र मन्दिर के लिए निर्धारित किया गया था। एक दिन मालवीयजी ने मानित चीफ इंजीनियर गंगाराम और सुपेरिण्टेण्डण्ट आफ वर्क्स ज्वालाप्रसाद दोनों को मन्दिर के बारे में अपनी योजना को विस्तार से बताया। दोनों मन्त्र-मुग्ध होकर सुनते रहे। मालवीयजी की अद्भुत योजना – विश्वविद्यालय के केन्द्र में विश्वनाथ मन्दिर, उसे घेर कर गङ्गाजल से प्रवाहित होने वाले एक नहर का निर्माण तथा उसी जल से खेती फार्म की सिंचाई – को सुनकर गंगारामजी खुशी से उछल पड़े। उन्होंने तुरन्त गंगा नदी के किनारे जलकल (Water Works) स्थापित

---

१. उन्नीसवीं शताब्दी में भारतवर्ष में कुल ३१ अकाल पड़े थे। उनमें चौबीस अकाल सन् १८५० से १९०० के बीच पड़े थे। इन २४ अकालों में भूख के कारण मरने वालों की संख्या दो करोड़ से अधिक थी। ऐसी स्थिति पुन: कभी न हो यही चिन्ता सर गंगाराम को सदा सता रही थी। मालवीयजी भी कृषि की उन्नति को अत्यन्त महत्त्व देते थे। शिलान्यास महोत्सव व्याख्यान-माला में उन्होंने दो और कृषि वैज्ञानिकों के व्याख्यानों का आयोजन किया था। वे कृषि-विशेषज्ञ थे—(1) Dr. Sam Higginbottom, Founder of Allahabad Agricultural Institute, (2) Dr. Harold Mann, Government of India's Adviser on Agriculture.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करने के लिए २०,००० रुपये और नहर निर्माण के लिए एक लाख रुपये का दान (Donation) देना स्वीकार कर लिया।

सन् १९२६ में सरकार ने भारतवर्ष में खेती के विकास सम्बन्धी विषयों पर विचार करने के निमित्त एक राजकीय आयोग (Royal Commission on Agriculture) नियुक्त किया। सर गंगाराम उस आयोग के एक सदस्य थे। आयोग के अध्यक्ष थे लार्ड लिनलिथगो जो सन् १९३६ में भारत के वाइसराय होकर आये। इस आयोग की बैठक के लिए सर गंगाराम को सन् १९२७ में इंगलैंड जाना पड़ा। वहीं १० जुलाई १९२७ को उनका देहान्त हो गया। वे उस समय ७७ वर्ष के थे। विश्वविद्यालय की एक अपूरणीय क्षति हो गयी।

ज्वालाप्रसाद भी अपने सरकारी पद पर लौट गये। सरकार में उनकी प्रोन्नति चीफ़ इंजीनियर के पद पर हो गयी थी। वहाँ से रिटायर होने के बाद, वे पुन: विश्वविद्यालय की मानित सेवा में आ गये। सन् १९३१ में जब मन्दिर का शिलान्यास हो रहा था तो वे विश्वविद्यालय की सेवा में थे। उन्होंने ही दो दिन अथक परिश्रम कर शिलान्यास के लिए उपयुक्त स्थानों को मानचित्र में दर्शाया था। उन्हीं स्थानों में से एक तपोनिधि श्रीकृष्णाश्रम स्वामीजी को ठीक प्रतीत हुआ और उसी स्थान में ११ मार्च १९३१ को मन्दिर का शिलान्यास हुआ। अत: राजा ज्वालाप्रसादजी मन्दिर के बारे में प्रत्येक बात को अच्छी तरह जानते थे।

१ अप्रैल १९३६ को उपकुलपति का कार्यभार लेते ही उन्होंने निश्चय किया कि सर्वप्रथम श्री गंगारामजी की इच्छा पूरी होनी चाहिए। जल कल के निमित्त २०००० रुपये उनके जीवन काल में ही विश्वविद्यालय के कोष में जमा हो गये थे। नहर निर्माण के लिए गंगारामजी द्वारा सङ्कल्पित दान की राशि उनके जीवनोपरान्त उनके पुत्रों से विश्वविद्यालय को प्राप्त हो गयी। नहर निर्माण के लिए आवश्यक नक्शे और अनुमानित खर्च का विवरण (Plans and estimates) शीघ्रता से बने और ९ अप्रैल १९३६ को भवन निर्माण समिति (Building Committee) द्वारा अनुमोदित भी हो गये। २६ अप्रैल १९३६ की बैठक में विश्वविद्यालय के (Council) कार्यकारिणी ने सङ्कल्प पारित कर दिया कि गंगाराम नहर की परियोजना को स्वीकृत किया जाय और कह दिया कि नहर का निर्माण शीघ्रता से हो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक शुभ मुहूर्त में कार्य प्रारम्भ हो गया। नवम्बर १९३६ के अन्त में नहर का ढाँचा बन कर तैयार हो गया। राजा ज्वालाप्रसादजी प्रान्तीय सरकार में चीफ इंजीनियर के पद पर थे। तभी उनको स्पष्ट रूप से विदित हो गया था कि नहर में गंगाजल को प्रवाहित करना सम्भव नहीं हो सकेगा। इस दिशा में उनके प्रयत्न सफल नहीं हुए थे। अत: उन्होंने गंगाराम नहर परियोजना में पाँच नल-कूप बनाने की व्यवस्था रखी। इन नलकूपों के बनने के पश्चात् ही नहर में जल भरा जा सकता था। नलकूलों का बनना आरम्भ हो गया था। आशा थी कि शिवरात्रि तक सभी नलकूप कार्य करने लगेंगे।

पूज्य मालवीयजी की पचहत्तरवीं वर्षगाँठ उसी वर्ष मनायी जाने वाली थी। भारतीय पञ्चाङ्ग के अनुसार उस वर्ष पौष कृष्ण अष्टमी (मालवीयजी का जन्म दिन) ५ जनवरी १९३७ को पड़ रहा था। निश्चय किया गया कि नहर से घिरे हुए मन्दिर परिसर में ही इस उत्सव को मनाया जाय। इसके लिए आवश्यक तैयारियाँ हो रही थीं। मालवीयजी दिसम्बर १९३६ के प्रारम्भ से अस्वस्थ हो गये थे। यह एक चिन्ता का विषय हो गया था। विश्वविद्यालय में उनके भक्तगण भगवान् से प्रार्थना कर रहे थे कि वे शीघ्र स्वस्थ हो जाँय। कुछ लोग श्रीमद्भागवत, अष्टम स्कन्ध तृतीय अध्याय में वर्णित गजेन्द्रमोक्ष कथा का पाठ नियमित रूप से करते थे। भक्तों पर भगवान् की कृपा हो गयी। मालवीयजी स्वस्थ हो गये और तुरन्त यात्रा में निकल गये फ़ैज़पुर में आयोजित कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में सम्मिलित होंने के लिए। अधिवेशन २६ से २९ दिसम्बर (१९३६) तक आयोजित था। मालवीयजी वहाँ समय से पहुँच गये। अधिवेशन समाप्त होने के पश्चात् ही वे वहाँ से चले और ५ जनवरी १९३७ को प्रात:काल वे काशी पहुँच गये। विश्वविद्यालय में उनके निवासस्थान के बाहर सुबह ही से दर्शकों की भीड़ लगी हुई थी। मालवीयजी ने सबको दर्शन दिये।

मन्दिर परिसर में जयन्ती उत्सव मनाने के लिए विशाल पण्डाल सजाया गया था। वहाँ यज्ञ-मण्डप में विश्वविद्यालय के ओरियण्टल कालेज के अध्यक्ष महामहोपाध्याय प्रमथनाथ तर्कभूषणजी की अध्यक्षता में ३० दिसम्बर से विष्णु याग चल रहा था। इसके साथ-साथ महादेव-माहात्म्य, शतचण्डी और भगवद्गीता का पाठ तथा महामृत्युञ्जय जप आदि हो रहे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

थे। नौ बजते-बजते सभामण्डप ठसाठस भर गया। ठीक दस बजे पूज्य मालवीयजी, काशीनरेश के साथ यज्ञशाला में पधारे। वहाँ यज्ञ और वेदध्वनि हो रही थी। पूर्णाहुति सम्पन्न हुई। तदनन्तर सभामण्डप में मालवीयजी का जय-ध्वनि के साथ भव्य स्वागत हुआ। अनेक कार्यक्रम हुए। तदनन्तर पूज्य मालवीयजी ने अपने आर्शीर्वचनों से सबको अभिषिक्त किया। जयन्ती उत्सव जय-जयकार के साथ सुसम्पन्न हुआ।

नलकूपों का कार्य चलता रहा। शीघ्र ही नहर में जल भरने के लिए पाँच नलकूपों का निर्माण पूरा हो गया। मन्दिर पूर्व दिशा को देखता बनना था। दो नलकूप मन्दिर के दाहिने दक्षिण दिशा में, एक मन्दिर के पीछे पश्चिम में, दो मन्दिर के बायें उत्तर दिशा में बनाये गये थे। फरवरी १९३७ में नहर में जल भरने का कार्य आरंम्भ हुआ और शिवरात्रि के पहले ही गंगाराम नहर चालू हो गया। नहर एक किलोमीटर लम्बी और पचास फीट चौड़ी थी। नहर के दोनों किनारे जल की गहराई चार फिट थी और मध्य में छः फीट। नहर पाँच खण्डों में विभक्त थी। बारी-बारी से इनमें जल भरा जाता था, बारी-बारी से पानी का निकास भी होता था। यह कार्य अत्यन्त व्यवस्थित ढंग से होता था। नहर से निकले हुए जल को खेती फ़ार्म तक ले जाने के लिए आवश्यक प्रबन्ध किये गये थे। इस जल से १५० एकड़ भूमि की सिंचाई की व्यवस्था हो गयी।

नहर में, तीन सुन्दर स्नान-घाट बंने थे—दो पुरुषों के लिए, एक स्त्रियों और बच्चों के लिए। सन् १९३७ में ही सेठ बृजमोहन दास बिड़ला से नहर के दोनों किनारे खम्भे बैठाकर विद्युत्-प्रकाश की व्यवस्था करने के निमित्त पाँच हज़ार रुपये का दान प्राप्त हो गया था। इस कार्य के सम्पन्न होते ही नहर का जो दृश्य देखने को मिला उसकी कल्पना ही की जा सकती है। चाँदनी रात में तो नहर का दृश्य और भी मनोहर हो जाता था। नहर के दक्षिण-पूर्व दिशा के खण्ड में तैराकी आदि के प्रबन्ध भी किये गये थे। तैराकी प्रतियोगिता का भी आयोजन सम्भव हो गया था।

गंगाराम नहर के निर्माण के पश्चात् राजा ज्वालाप्रसादजी ने मन्दिर-निर्माण के काम में हाथ लगाया। पहले नींव का कार्य आरम्भ हुआ। इतने विशाल और ऊँचे मन्दिर का आधार सुदृढ़ होना था। अतः प्रत्येक कार्य अत्यन्त सावधानी से होता था। भूमि की सतह तक आते आते, मन्दिर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निर्माण के लिए उपलब्ध धन समाप्त हो गया। कुरसी के आगे निर्माण कार्य बढ़ नहीं सका। जो स्थिति सन् १९३७ के अन्त में थीं, उसे अगले पृष्ठ में दिये गये नक्शे में देखा जा सकता है।

मालवीयजी अस्वस्थ ही चल रहे थे। यदि वे स्वस्थ होते तो मन्दिर निर्माण के लिए आवश्यक धन एकत्र करना कठिन नहीं था। किसी ने सुझाव दिया कि कायाकल्प की चिकित्सा से वे पूरी तरह स्वस्थ हो जायेंगे। १६ जनवरी १९३८ को तपसी बाबा की देख-भाल में रामबाग (शिवकोटि, प्रयाग) में कायाकल्प तन्त्र का प्रयोग आरम्भ हुआ। ४० दिन तक विधिवत् एक कुटी में विश्राम करने के बाद २४ फरवरी १९३८ को मालवीयजी बाहर निकले। उस समय उनका वजन ६ पौंड बढ़ गया था, सिर के कुछ बाल भी काले हो गये थे, नेत्रों की रोशनी भी कुछ बढ़ गयी थी और चेहरे पर भी बुढ़ापे के चिह्न कम हो गये थे। परन्तु शीघ्र ही उनका शरीर शिथिल हो गया। कायाकल्प का प्रयोग उन पर सफल नहीं हुआ। मालवीयजी का कहना था कि उन्होंने कायाकल्प के नियमों का ठीक तौर पर पालन नहीं किया, इसी से उनको पूर्ण सफलता नहीं मिली। सफलता न मिलने के अनेक कारण हो सकते हैं। वास्तविक कारण तो यही था कि कायाकल्प कुटी में बिना कार्य लेटे रहना मालवीयजी के लिए अस्वाभाविक था, उसने उनके परिश्रम करने की शक्ति को क्षीण कर दिया। चिन्तामुक्त होकर लेटे रहना उनके स्वभाव के विरुद्ध था।

अपने शरीर की स्थिति को देखते हुए मालवीयजी ने निश्चय किया कि विश्वविद्यालय के कुलपति का भार किसी दूसरे को सौंप देना चाहिए। तुरन्त खोज शुरू हो गयी। ईश्वर की कृपा से विश्वविद्यालय के कुलपति का भार अवैतनिक रूप से संभालने के लिए प्रोफेसर सर्वेपल्लि राधाकृष्णान् (बाद में भारत के द्वितीय राष्ट्रपति) तैयार हो गये। प्रोफेसर राधाकृष्णान् विश्वख्यातिप्राप्त विद्वान् थे और वे सन् १९२७ से विश्वविद्यालय के मानित यूनिवर्सिटी प्रोफेसर (Honorary University Professor) के रूप में सम्बद्ध भी थे। सन् १९२८ से वे विश्वविद्यालय कोर्ट के सदस्य भी थे।

१७ सितम्बर १९३९ को विश्वविद्यालय के कोर्ट द्वारा वे कुलपति-चुन लिए गये और अवैतनिक कुलपति के रूप में २४ सितम्बर १९३९ को उन्होंने कुलपति के पद का भार ले लिया। तब से १६ जनवरी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

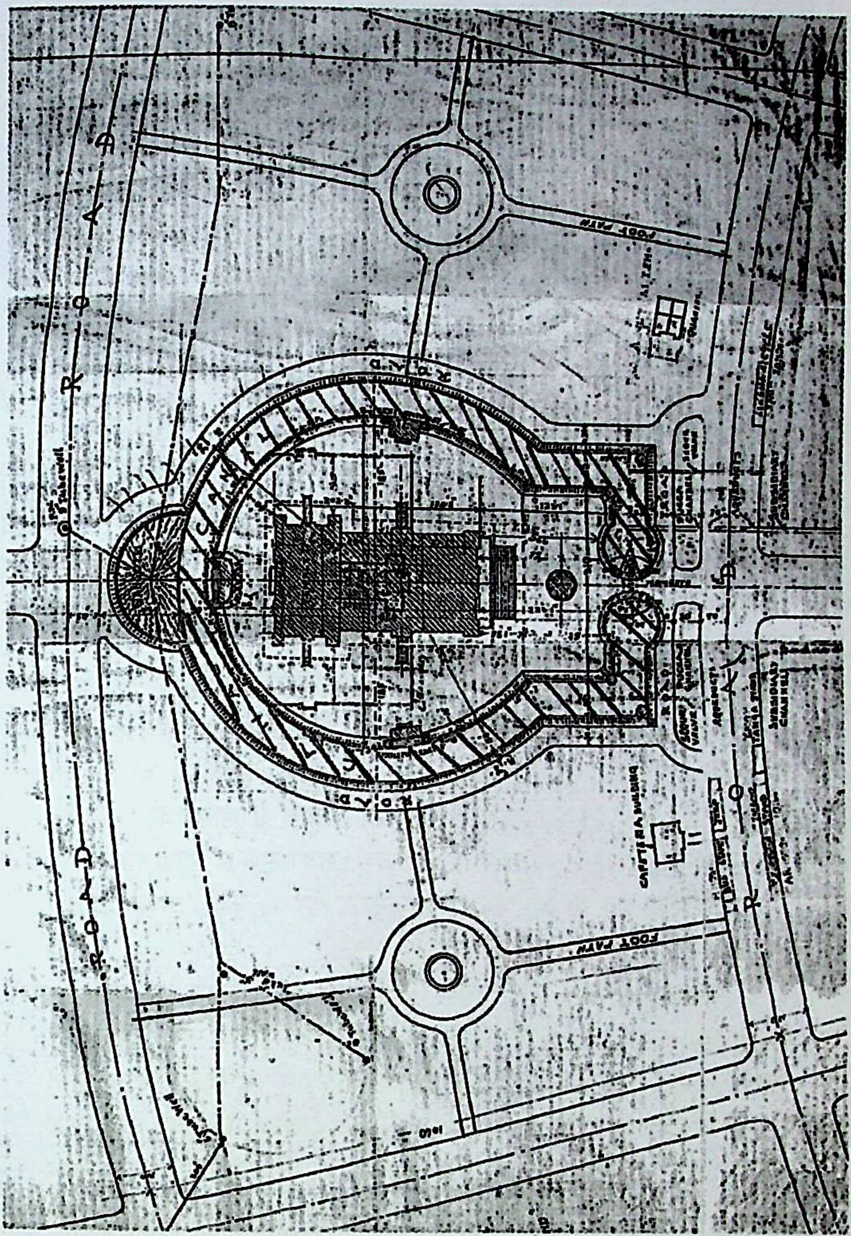

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१९४८ तक (अर्थात् ८ वर्ष से भी अधिक समय तक) विश्वविद्यालय उन्हीं के कुशल नेतृत्व में आगे बढ़ा ।

विश्वविद्यालय के आजीवन रेक्टर के रूप में मालवीयजी सुशोभित रहे । उनका निवास स्थान विश्वविद्यालय परिसर में मालवीय भवन में ही रहा और विश्वविद्यालय के सभी मुख्य विषयों पर उनका मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा ।

प्रोफेसर राधाकृष्णन् के कार्यकाल में विश्वविद्यालय का रजतजयन्ती-महोत्सव २१ जनवरी १९४२ को वसन्त पञ्चमी के दिन मनाया गया । उस महोत्सव में महात्मा गांधी और महामना मालवीयजी दोनों एक मंच पर विराजमान थे । देश के सभी प्रमुख नेतागण और जानेमाने विद्वान् भी मंच को सुशोभित कर रहे थे । अत्यन्त अद्भुत था वह दृश्य ।

उस महोत्सव के कुछ महीनों बाद 'भारत छोड़ो' आन्दोलन प्रारम्भ हो गया । विश्वविद्यालय पर बड़ी विपत्ति आ गयी । १९ अगस्त १९४२ को पुलिस और सेना विश्वविद्यालय में घुस आयी । छात्रावास से सभी विद्यार्थियों को सेना ने विश्वविद्यालय के बाहर निकाल दिया । दो महीने से अधिक समय विश्वविद्यालय बन्द रहा, फिर धीरे-धीरे खोला गया । प्रोफेसर राधाकृष्णन् ने अत्यन्त कुशलता से उस समय विश्वविद्यालय की रक्षा की ।

सन् १९४५ में द्वितीय महायुद्ध समाप्त हुआ । २५ मार्च १९४६ को केबिनेट मिशन का भारत में आगमन हुआ, बातचीत चली । २ दिसम्बर १९४६ को जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत की अन्तरिम सरकार बनी । महामना मालवीयजी को जब इसकी सूचना मिली तब उनके श्रीमुख में एक प्रकाश आ गया और उन्होंने धीरे से कहा 'अपने देश में अपना राज' ।

नवम्बर १९४६ के प्रारम्भ से मालवीयजी अधिक अस्वस्थ हो गये । उन्हें आक्सीजन में रखने की आवश्यकता भी पड़ गयी थी । सेठ जुगल किशोर बिड़ला उन्हें देखने के लिए बराबर मालवीय भवन आते रहे । ऑक्सीजन में रखे गये मालवीयजी को देखकर एक दिन उन्हें कुछ घबराहट हो गयी । वे बहुत देर तक मालवीयजी के मुख को निहारते रहे । उन्हें यह आभास हुआ कि महामनाजी किसी कारण अत्यन्त बेचैन हैं । उन्हें ज्ञात हुआ कि वे सदा विश्वनाथ मन्दिर के बारे में ही सोचते रहते हैं, मन्दिर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्दिर का प्रवेश द्वार दुकानों के साथ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वारपाल सहित भीतरी प्राकार का प्रवेश द्वार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महामना मालवीय जी बाहरी प्राकार में मन्दिर को निहारते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

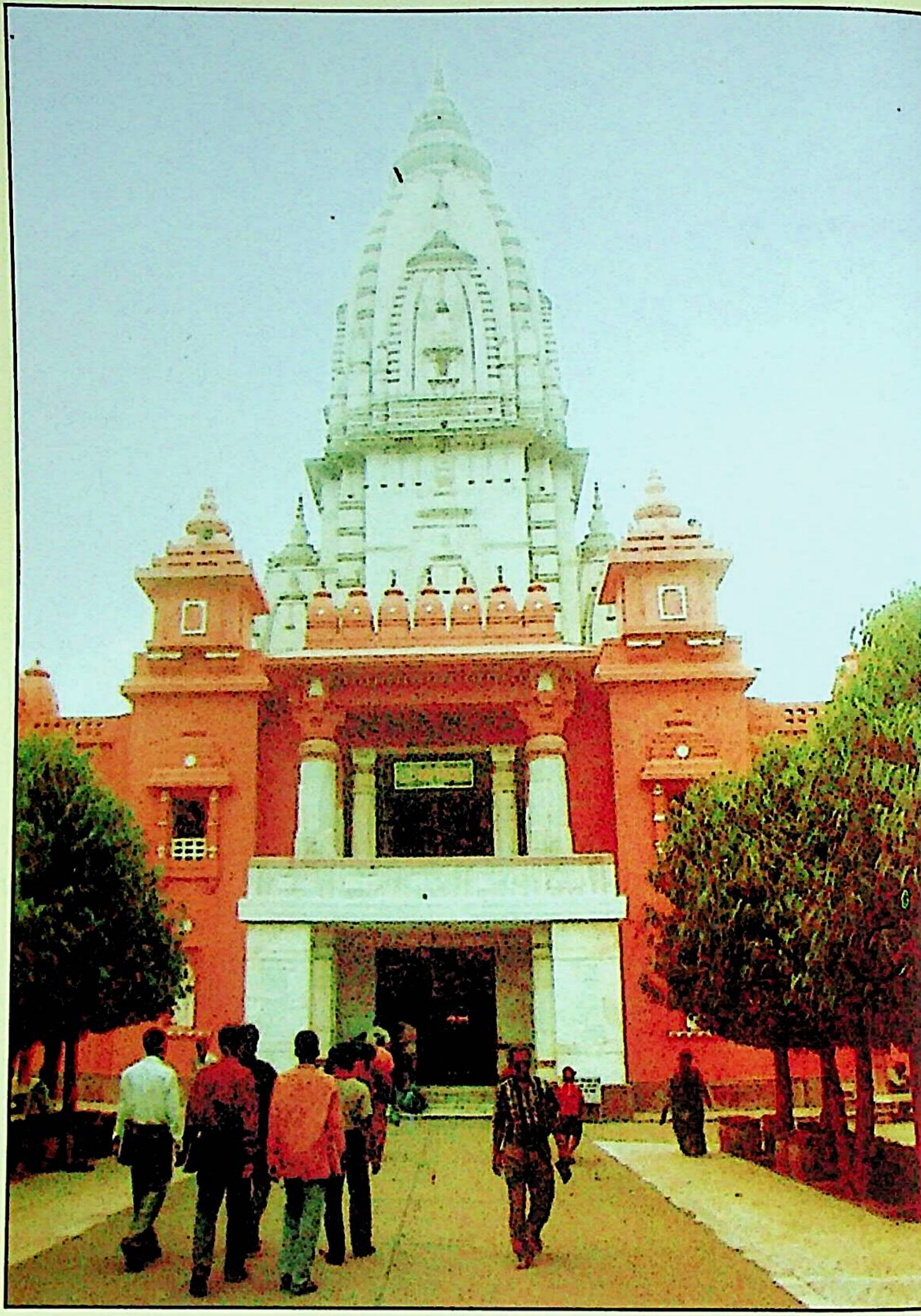

मन्दिर - पूरा नीचे से शिखर तक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

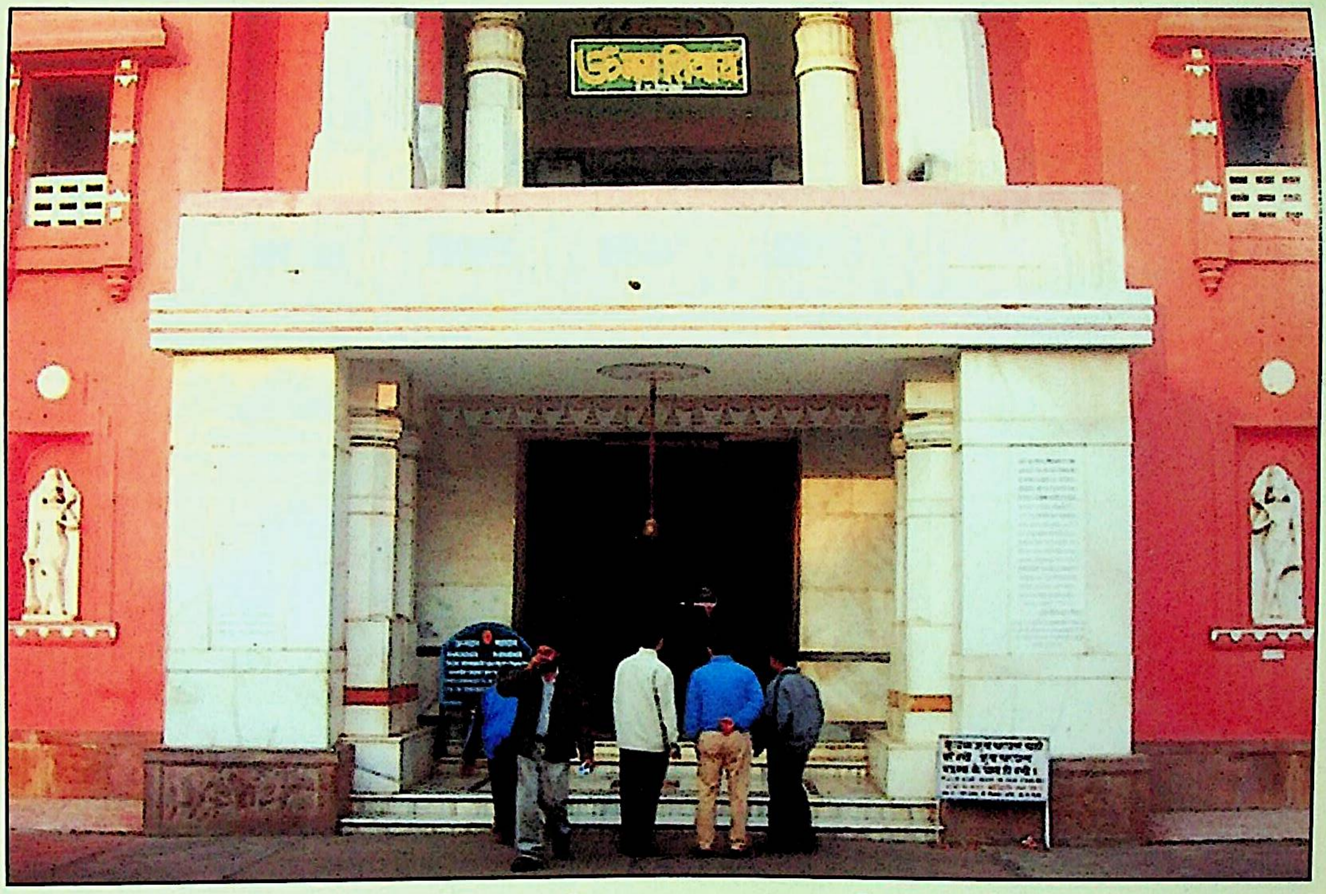

मन्दिर का प्रवेश स्थान - द्वारपाल सहित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवान् विश्वनाथजी गर्भगृह में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पञ्चमुखी महादेव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गणेश, अम्बिका (पार्वती)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महावीर हनुमान जी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लक्ष्मी नारायण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

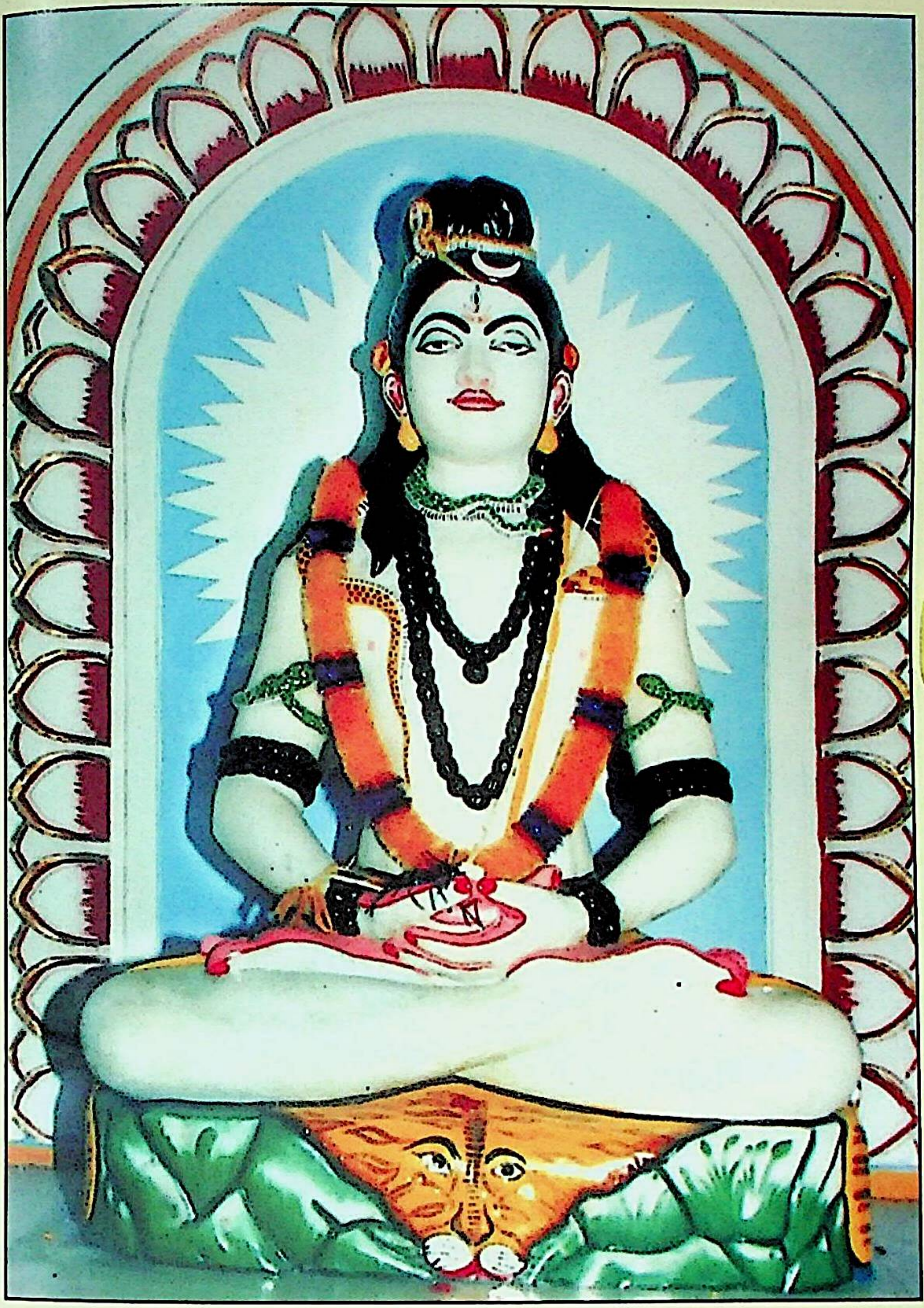

महादेव शिवशङ्कर तपस्या की मुद्रा में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महादेव जी के सामने कलश

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महामाया सिंहवाहिनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

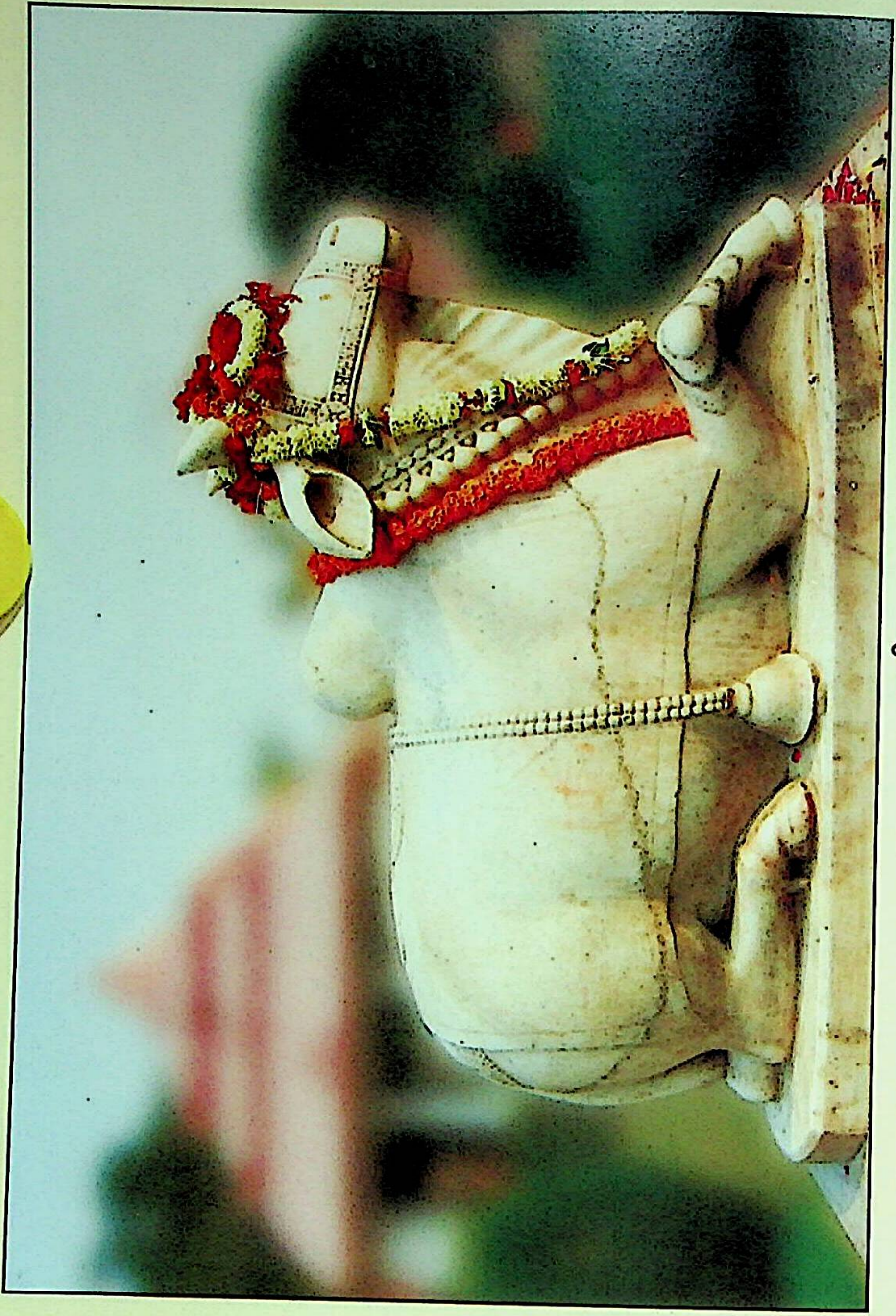

नन्दी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कैसे बनेगा, यही चिन्ता उन्हें सता रही है ।

सेठ जुगल किशोर बिड़ला, उनके साथ आये दो मित्रों से कुछ परामर्श करने के बाद, मालवीयजी के समीप गये । करबद्ध होकर उन्होंने महामनाजी से विनती की कि वे विश्वनाथ मन्दिर के बारे में बिलकुल चिन्ता न करें । सेठ जी ने उन्हें पुनः पुनः आश्वस्त करते हुए वचन दिया कि वे पूर्ण तत्परता के साथ मन्दिर के निर्माण कार्य में लग जायेंगे और शीघ्रातिशीघ्र उसे पूरा कर उनकी इच्छा को पूर्ण कर देंगे ।

सेठ जुगल किशोर बिड़ला के वचनों को सुनकर महामनाजी के मुखमण्डल में परम शान्ति व्याप्त हो गयी । उसके दो-तीन दिन बाद १२ नवम्बर १९४६ को उनका शरीर छूट गया और वे अमर हो गये ।

❀ ❀ ❀ ❀

सेठ जुगल किशोर बिड़लाजी के प्रयास से विश्वनाथ-मन्दिर का निर्माण कार्य शीघ्र ही प्रारम्भ हो गया और सन् १९५४ तक, शिखर को छोड़कर बाकी सब कार्य पूर्ण हो गया था । शिखर बन रहा था और उसके पूर्ण होने में सात-आठ वर्ष का समय लग सकता था ।

सन् १९५४ के जुलाई के महीने में डा॰ सी॰पी॰ रामस्वामि अय्यर ने विश्वविद्यालय के कुलपति का भार संभाला था । उन्होंने अपना एक विचार व्यक्त किया कि मन्दिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा कर दी जाय तो मन्दिर में पूजा-पाठ आदि प्रारम्भ हो सकता है । सात-आठ वर्ष प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं होगी । सभी लोगों को यह विचार ठीक लगा ।

किसी ने उनको सुझाव दे दिया कि मंदिर में पञ्चमुखी शिव की मूर्ति की स्थापना की जाय तो अच्छा होगा । मूर्ति निर्माण के लिए उपयुक्त ग्रेनाइट पत्थर ढूंढ़ कर शास्त्रोक्त प्रकार से पञ्चमुखी शिव की मूर्ति बनाने के लिए मद्रास के एक स्थपति को 'आर्डर' दे दिया गया । लगभग एक वर्ष में पञ्चमुखी शिव एवं पार्वती की मूर्तियाँ बन गयीं । मूर्तिकार श्री नित्यानन्द स्थपति और उनके पुत्र श्री लिंगाचार्य स्थपति दोनों मूर्तियों को लेकर अप्रैल १९५६ में काशी आ गये । मूर्तियों को मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम कोने के कमरे में रख दिया गया । स्थपति नित्यानन्दजी के साथ उनकी पत्नी भी आयी थीं । वे लोग स्वयंपाकी थे । अतः परिवार के तीनों सदस्यों को भगवानदास हॉस्टल के एक वार्डन के खाली आवास में टिकाया गया । मूर्तियों की प्रतिष्ठा के लिए १३ जुलाई १९५६ के दिन, मुहूर्त निश्चित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुआ था। पर्याप्त समय था। अतः स्थपतिजी से कहा गया कि मूर्तियों को काले संगमरमर की तरह चिकना कर पालिश करें तो अच्छा होगा। वे मान गये और अगले दिन से हीं उन्होंने यह कार्य आरम्भ कर दिया। प्रातःकाल स्नान, पूजादि समाप्त कर भगवानदास हॉस्टल से चलकर मन्दिर के पश्चिम-स्थित छोटे द्वार से अपने कार्य-स्थल (अर्थात् मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम स्थित छोटे कमरे में) आ जाते थे। मन्त्रजप करते हुए ही वे कार्य करते थे। नित्यानन्द कहते थे नेमनिष्ट होकर भगवद्ध्यान् करते हुए हीं मूर्ति निर्माण करना चाहिए, यही शास्त्रविधान है। दो महीनों में मूर्तियों को पालिश करने का कार्य पूरा हो गया। दोनों मूर्तियों के आधार शिला भी थे।

इस बीच डा० सी० पी० रामस्वामि अय्यर ने कुलपति पद को त्याग दिया और वे मद्रास चले गये। १३ जुलाई १९५६ को मूर्तियों की प्रतिष्ठा नहीं हो सकी। १६ जुलाई १९५६ से दक्षिणायण प्रारम्भ हो जाता था। दक्षिणायण में देवप्रतिष्ठा नहीं होती है। प्रतिष्ठा का मुहूर्त १४ जनवरी १९५७ के बाद ही मिल सकता था। छः महीने की अवधि में प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए अच्छी तैयारियाँ हो सकती थीं। परन्तु एतन्मध्य कुछ लोगों ने एक आपत्ति उठा दी कि शिखर का निर्माण पूर्ण होने के पश्चात् ही मूर्तिप्रतिष्ठा हो सकती है। इस विषय में धर्मशास्त्र के मूर्धन्य विद्वानों की राय ली गयी। उन लोगों ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि मूर्तिप्रतिष्ठा के बाद भी शिखर का कार्य चलता रह सकता है, उसमें कोई आपत्ति नहीं है, केवल गर्भगृह को शास्त्रोक्त विधि प्रकार सूत्र-बन्धन कर देना चाहिए। शिखर बनने के बाद विधिवत् कुम्भाभिषेक होगा।

कुछ दिनों के बाद एक सज्जन ने एक तर्कसंगत प्रश्न उठाया। उन्होंने कहा कि काशी में तो विश्वनाथजी लिंग स्वरूप में विद्यमान हैं। "विश्वनाथ का प्रसाद" विश्वविद्यालय है तो विश्वविद्यालय में भी उनका स्वरूप वही होना चाहिए न ? इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं था। निश्चय हो गया कि विश्वविद्यालय के विश्वनाथ मन्दिर के मुख्य गर्भगृह में नर्मदेश्वर शिव लिङ्ग की ही स्थापना होनी चाहिए। यह भी मान लिया गया कि भगवान् की प्रतिष्ठा शीघ्र कर दी जाय और शिखर का कार्य चलता रहे। प्रतिष्ठा के लिए शुभमुहूर्त निश्चित होने के बाद प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए उपयुक्त कार्यक्रम बनाने की योजना थी। परन्तु ईश्वर का सङ्कल्प कुछ दूसरा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही था। भोले बाबा विश्वनाथ को शायद कोई समारोह पसन्द नहीं था।

सेठ जुगल किशोर बिड़ला ने विश्वविद्यालय के धर्मशास्त्र एवं मीमांसा विभाग के अध्यक्ष पण्डित विश्वनाथ शास्त्री पाण्डेय से परामर्श किया और प्रतिष्ठा के लिए शुभमुहूर्त निश्चित कर लिया।

१७ फरवरी १९५८ सोमवार फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी महाशिवरात्रि के पवित्र अवसर पर पण्डित विश्वनाथ शास्त्रीजी के नेतृत्व में प्रतिष्ठा के लिए निर्धारित सभी वैदिक कर्म पूरी रात विधिवत् हुए और विश्वविद्यालय के विश्वनाथ मन्दिर में विश्वनाथ भगवान् प्रतिष्ठित हो गये।

शिखर का कार्य चलता रहा और सन् १९६६ के अन्त में ही यह कार्य पूरा हो सका। पूरे शिखर पर सफेद संगमरमर लगाकर उसे पालिश कर चमकाने में बहुत समय लगा। यह अत्यन्त कठिन कार्य था। शिखर के ऊपर एक स्वर्ण कलश बैठाया गया। इस स्वर्ण कलश की ऊँचाई दस फीट है। मन्दिर के शिखर की ऊँचाई ७६ मीटर (२५० फीट) है। माना जाता है कि भारतवर्ष में यह सबसे ऊँचा शिव मन्दिर है। दक्षिण भारत में तञ्जावूर में स्थित बृहदीश्वर मन्दिर की ऊँचाई २१६ फीट है। उससे भी ऊँचा है हमारे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का विश्वनाथ मन्दिर।

अब चलें और देखें इस भव्य मन्दिर की विशेषताओं को। विश्वविद्यालय के अर्धचन्द्राकार अभिन्यास (ले-आउट प्लैन) के केन्द्र में स्थित यह विश्वनाथ मन्दिर ठीक पूर्व दिशा को देखकर है। मन्दिर में प्रवेश करने के लिए प्रथम द्वार पर पन्द्रह फीट चौड़ा मार्ग है। इसके दोनों किनारे फूल, माला, विल्वपत्र आदि की दुकानें हैं। फूल-मालाओं की दुकानों को पार करते ही मन्दिर का बाहरी प्राकार दृष्टिगोचर होता है। दुकानों के अन्त में दोनों ओर सीढियाँ बनीं हैं। सीढ़ियों पर चढ़कर छत पर पहुँचें तो हम मन्दिर को घेरकर बने एक वृत्ताकार नहर का ढाँचा देख सकते हैं। इस नहर के ढाँचे का निर्माण सन् १९३६-३७ में हुआ था। इसके बारे में पूरा विवरण पहले ही दिया जा चुका है।

लगभग बीस वर्ष तक इस नहर में जल भरा रहता था। नियमित रूप से जल की निकासी होती थी और उस जल से विश्वविद्यालय के कृषिफार्म में सिंचाई होती थी। धीरे-धीरे इस कार्य में व्यवधान आने लगे। किसी न किसी कारण से पूरे नहर-जाल को सदा चालू रखना सम्भव नहीं हो सका। सन् १९७० क़े बाद तो नहर के किसी भी खण्ड में जल दिखाई नहीं देता था। अब तो नहर का केवल ढाँचा ही रह गया है। मन्दिर के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पीछे पश्चिम दिशा में ढाँचा भी नहीं है, उसे गिरा दिया गया है।

आज की परिस्थिति में इस नहर को पुनः क्रियात्मक बनाना सम्भव नहीं दीखता है। मालवीयजी जब विश्वविद्यालय के कुलपति थे तभी इस नहर का निर्माण हुआ था। नहर में गङ्गा-जल को प्रवाहित करने का जो विचार पहले उनके मन में आया था, उसे उन्हें त्याग देना पड़ा।

अब एक योजना प्रस्तुत की गयी है कि नहर के ढाँचे को शुद्ध मिट्टी से पाटकर उसे एक सुन्दर एवं आकर्षक पुष्पवाटिका के रूप में परिवर्तित कर दिया जाय तो अच्छा होगा। भगवान् विश्वनाथ की इच्छा होगी तो यह कार्य शीघ्र सम्पन्न हो जायेगा।

अब सीढ़ियों से उतरकर मन्दिर की ओर जानेवाले पथ पर चलें। तीस फीट चौड़े इस पक्के मार्ग पर बायीं और दायीं दोनों तरफ दूर्वाक्षेत्र (हरी दूब का लॉन) है। पक्के मार्ग की पूरी लम्बाई लगभग २०० फीट है। इसके बीचोंबीच काला चमकता ग्रेनाइट संगमर्मर जड़ा हुआ एक गोल चबूतरा है जिसका व्यास १६ फीट १० इंच है। इस गोल चबूतरे पर सफेद संगमरमर के एक पादपीठ आधार पर महामना मालवीयजी मन्दिर को निहारते हुए मूर्तिरूप में खड़े हैं।

मूर्ति के पीछे चबूतरे के पास खड़े होकर बायीं और दायीं ओर देखें। मूर्ति से लगभग ५५ फीट दूर दोनों दिशा में ४८ फीट लम्बे १६ फीट चौड़े आयताकार कुण्ड बने हैं जिनमें दो फीट जल देख सकते हैं। इन दोनों कुण्डों में (मूर्ति के सीध में) सिमेंट के बने गैंडे जल में खड़े हैं। गैंड़ें की नाक के सींग से फुहारा निकल रहा है। बहुतों को यह दृश्य आश्चर्यजनक लगता है।

अब महामनाजी के दर्शन कर लें, तदनन्तर उनके बायें हाथ के तरफ के पाद संगमरमर-पीठ पर अंकित अभिलेख को पढ़ें :—

महामना पं० मदन मोहन मालवीयजी
का
धर्मोपदेश

सब देवन के देव प्रभु सब जग के आधार।
दृढ़ राखौ मोहिं धर्म में बिनवौं बारम्बार ।।
सत चित आनन्द धन प्रभु सर्वशक्ति आधार।
धनबल जनबल धर्मबल दीजै सुख संसार ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाप दीनता दरिद्रता और दासता पाप ।
प्रभु दीजै स्वाधीनता मिटै सकल संताप ।।
जाके मन प्रभु तुम बसौ सो डर कासौं खाय ।
सिर जावै तो जाय प्रभु किन्तु धर्म नहिं जाय ।।
उठौं धर्म के काम में उठौं देश के काज ।
दीनबन्धु तव नाम लै नाथ राखियो लाज ।।

उपर्युक्त उपदेश को हृदयंगम करते हुए महामनाजी के दाहिने हाथ की ओर पादपीठ पर अंकित उनके प्रिय भजन को पढ़ें :—

उत्तम तप

घट-घट-व्यापक राम जप रे !

मत कर बैर, झूठ मत भाखै, मत परधनहर, मत मद चाखै ।
जीव मत मार, जुआ मत खेलै, मत परतिय लख, यहि तेरो तप रे ।
घट-घट-व्यापक राम जप रे !

'घट-घट-व्यापक राम' जपते हुए, परिशुद्ध होकर हम मन्दिर की ओर बढ़ें । गोल चबूतरे से ठीक ९१ फीट पर मन्दिर का बाहरी प्राकार समाप्त होता है और वहीं भीतरी प्राकार में जाने के लिए प्रवेशद्वार बना है । प्रवेश द्वार पर दोनों ओर मजबूत पत्थर पर बने द्वारपाल खड़े हैं । इस द्वार पर लोहे के मज़बूत फाटक लगे हैं जो रात्रि में ९ बजे से प्रात: ४ बजे तक बन्द कर दिये जाते हैं ।

तीन सीढ़ियाँ चढ़कर द्वार की ड्योढ़ी पर खड़े होकर वहाँ से लगभग १२५ फीट दूर विद्यमान मन्दिर को ध्यानपूर्वक देखें, मन्दिर की कुरसी से शिखर तक दृष्टि को दौड़ाएँ और आनन्द का अनुभव करें ।

लोहे के फाटक के पास स्थित ड्योढ़ी की लम्बाई २८ फीट ८ इंच है और चौड़ाई १४ फीट ६ इंच है । उससे सट कर दोनों तरफ बने हुए कमरों में मन्दिर के कार्यालय हैं । कार्यालय के समीप ही एक सुरक्षित स्थान पर दर्शनार्थी अपने जूते, चप्पल आदि रख सकते हैं । वही कुछ दूर, हाथ पाँव धोने की व्यवस्था भी है ।

अब तैयार होकर मन्दिर के मुख्य प्रवेश स्थान पर आकर मन्दिर में प्रवेश करें । प्रथम मण्डप १६ फीट लम्बा और ११ फीट चौड़ा है । उससे होकर भीतर जाँय तो ४५ फीट लम्बा और २४ फीट चौड़ा हॉल है । इसी हॉल से ऊपरी मंजिल में जाने के लिए दोनों ओर चौड़ी और सुगमता से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चढ़ने लायक सीढ़ियाँ है । इस हॉल से आगे बढ़ें तो विशाल सभा-मण्डप में पहुँचेंगे । इस सभा-मण्डप का भीतरी भाग पूरब-पश्चिम ६८ फीट ६ इंच लम्बा और दक्षिण-उत्तर २६ फीट चौड़ा है । मण्डप की ऊँचाई लगभग ४२-४५ फीट है । मण्डप में चारों ओर मिलाकर २० खम्भे हैं । पूरब-पश्चिम ६८ फीट ६ इंच लम्बाई के बाद ७ $\frac{१}{२}$ फीट का गलियारा दोनों ओर है । गलियारे की ऊँचाई १४$\frac{१}{२}$फीट है । बड़ी सभाएँ, कथा, प्रवचन, कीर्तनादि इस मण्डप में होते हैं । नीचे के गलियारे के ऊपर, ऊपरी मंजिल में भी गलियारे हैं जिनमें मज़बूत मुँडेरे बनें हैं । अत: सभामण्डप में हो रहे कार्यक्रमों को ऊपरी मंजिल से भी कुछ लोग देख सकते हैं ।

सभामण्डप से होते हुए सीधे भगवान् विश्वनाथ के गर्भगृह में पहुँचें । गर्भगृह की लम्बाई और चौड़ाई दोनों ३२ फीट है, अर्थात् गर्भगृह चौकोर है । गर्भगृह के मध्य १० फीट x १० फीट का एक अष्ट-कोण मंच है जिसके मध्य् में, अरघा में भगवान् विश्वनाथ प्रतिष्ठित हैं ।

गर्भगृह १० फीट चौड़ी दीवार से घिरा है जिसमें चार द्वार हैं—पूर्वी द्वार, दक्षिणी द्वार, पश्चिमी द्वार और उत्तरी द्वार । प्रत्येक द्वार की चौड़ाई ६ फीट है । चारों द्वार में लकड़ी के मज़बूत दरवाजे लगे हैं ।

गर्भगृह के बाहर चारों ओर परिक्रमा के लिए विशाल स्थान है । गर्भगृह के पूर्व दिशा में परिक्रमा की लम्बाई १२८ फीट और चौड़ाई २५फीट है । पश्चिम दिशा में लम्बाई १२८ फीट और चौड़ाई २३ फ़ीट है । दक्षिण और उत्तर दिशा में लम्बाई ९१ फीट और चौड़ाई २३ फीट ५ इंच है ।

गर्भगृह के पूर्व दिशा के परिक्रमा के साथ सटे १४ फीट x ११ फीट के दो कमरे, एक दक्षिण और एक उत्तर में, हैं । दक्षिण के कमरे में पञ्चमुखी शिव स्थापित हैं । शिवजी का एक नाम पञ्चानन है । पञ्चानन की आराधना का विशेष महत्त्व बताया गया है । इसका विवरण महानारायणोपनिषद् में मिलता है* । पञ्चमुखी शिव की मूर्ति में पश्चिमदिशा को देख रहे मुख को सद्योजात, कहते हैं । उत्तर दिशा को देख रहे मुख को वामदेव कहते हैं । दक्षिण दिशा को देख रहे मुख को अघोर कहते हैं । पूर्व दिशा को देख रहे

* १. **सद्योजात :** सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नम: । भवेभवे-नातिभवे भवस्व माम् । भवोद्भवाय नम: ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुख को तत्पुरुष कहते हैं। ऊर्ध्ववक्त्र मुख को ईशान कहते हैं।

पञ्चमुखी शिव के ठीक सामने उत्तर दिशा के कमरे में देवी पार्वती और गणेशजी विराजमान हैं। गणेशजी की मूर्ति संगमरमर पत्थर में बनायी गयी है और पार्वती देवी की मूर्त्ति काले ग्रेनाइट पत्थर में। भगवान्, भगवती आदि की मूर्ति बनाने के लिए एक विशेष प्रकार का ग्रेनाइट चाहिए। इसमें अग्नि, जल और नाद तीनों का होना आवश्यक है। अनुभवी स्थपति ही उसको पहचान सकते हैं। पञ्चमुखी शिव और पार्वती की मूर्तियाँ ऐसे विशेष ग्रेनाइट पत्थर ही से बनी हैं।

पञ्चमुखी शिव और पार्वती एवं गणेश के दर्शन करने के पश्चात् परिक्रमा के मार्ग से सभामण्डप के दक्षिण-पूर्व विराजमान हनुमानजी के दर्शन कर लें। तदनन्तर हम मन्दिर के प्रवेशद्वार के समीप स्थित सीढ़ियों द्वारा ऊपरी मंजिल पर पहुँच कर भगवान् लक्ष्मी नारायण, भगवान् शिव और सिंहवाहिनी दुर्गा देवी के दर्शन करें। ये तीनों मूर्तियाँ संगमरमर में बनी हैं और रंगीन हैं। कहने की आवश्यकता नहीं है कि ये अत्यन्त आकर्षक भी हैं। यहाँ एक विशेष बात का उल्लेख भी आवश्यक है। बीच के कमरे में जिसमें भगवान् शिव योगमुद्रा में विराजमान हैं, उनके सामने एक कलश संगमरमर में बना है। निचले तल्ले में जहाँ भगवान् विश्वनाथ अष्ट-कोण मंच में प्रतिष्ठित हैं उस मंच को यह कलश पूर्णरूप से आच्छादित कर लेता है ताकि इस स्थान पर किसी का पाँव न पड़े। कहते हैं कि यह कलश विशेष संगमरमर के एक ही टुकड़े से बना है। इस कमरे की भीतरी छत एक गोल मुकुट की तरह बनी है जिसका उभार लगभग तीस फीट है।

---

२. वामदेव वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमश्श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमस्सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः।

३. अघोर अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यस्सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।

४. तत्पुरुष तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

५. ईशान ईशानस्सर्व-विद्यानामीश्वरस्सर्व-भूतानां ब्रह्माऽधिपति-र्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्दिर में स्थापित मूर्तियों के दर्शन करने के पश्चात् हम मन्दिर की दीवारों में उत्कीर्ण चित्रों को अवश्य देखें। भारतवर्ष के सभी महापुरुषों के सम्बन्ध में कुछ जानकारी देते हैं ये चित्र। ज्ञानवर्धक इन चित्रों को विवरण सहित मुद्रित कर, प्रकाशित करने की एक योजना है। भगवान् विश्वनाथ की इच्छा हुई तो यह एलबम (चित्रसंग्रह) शीघ्र ही पाठकों को उपलब्ध हो जायगा।

मन्दिर के अन्दर सब स्थानों को देखने के बाद मन्दिर के बाहर आकर सम्पूर्ण मन्दिर की एक परिक्रमा कर लें। बायीं ओर घूमते ही हम लगभग १२० फीट दूर एक चौकोर मण्डप देखते हैं। २७ x २७ फीट के इस मण्डप के ऊपरी भाग में लिखा है—विश्रामशाला। छोटी सभाएँ, कथा, प्रवचनादि इस मण्डप में आयोजित होते हैं। परिक्रमा करते हुए पश्चिम दिशा में आवें। मन्दिर की कुल चौड़ाई २०६ फीट ६ इंच है उसके बीचोंबीच आकर भगवान के गर्भगृह के पश्चिमी द्वार के द्वारा विश्वनाथजी के दर्शन कर सकते हैं। उत्तर दिशा में गर्भगृह के ठीक सामने नन्दी विराजमान हैं। नन्दी को भी लेकर परिक्रमा करनी चाहिए। नन्दी के उत्तर की ओर विश्रामशाला जैसा ही एक मण्डप है जिसके ऊपरी भाग में लिखा है—यज्ञशाला। उत्सवादि के अवसर पर इस मण्डप में हवन इत्यादि का आयोजन होता है। परिक्रमा पूरी कर अब हम मन्दिर के सामने आ जाते हैं।

करबद्ध होकर भगवान् विश्वनाथ से प्रार्थना कर लें कि–

विश्व का कल्याण हो
जगत् में सर्वत्र शान्ति रहे और
सभी लोग सुखी रहें।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सेठ जुगल किशोर बिड़ला

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC-0. Public Domain. Digitization by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi